एक सफर.... राजधानीका....

लेखक : मुनि आत्मदर्शन विजय म.सा.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतभक्त – द्रव्य सहायक

१. किशोरचंदजी चोरडीया, हैद्राबाद
२. शा मगनलाल एण्ड कं. शाहपुर, कर्णा. (राज.रायपुरीया)
३. अशोक कुमारजी सम्पतराजजी गुन्देचा, नरेश हार्डवेर (मुडीगेरे - कर्णा.)
४. अमरललित एण्ड कं, - कोइम्बतुर
५. सुरवराज चंपालाल - राजास्ट्रीट - कोइम्बतुर
६. मीठालाल एण्ड कं., ओपनकारा स्ट्रीट - कोइम्बतुर
७. सोहनलाल बोहरा, अरिहंत एजेन्सी-ओपनकारा स्ट्रीट, कोइम्बतुर
८. रेखचंद प्रेमचंद, प्रेमचंद जयचंद पारेख
२७०६ मेनबजार, ऊटी
९. प्रमोदचन्द, २३, माउन्ट प्लेझेन्ट कुनुर (नीलगिरि)
१०. शा मिश्रमलजी वक्तावरमलजी राणावत, टीप्टुर, (राज. दुजाना)
११. नटवरलाल ए. जैन, अम्बिका टेक्स्टाइल्स, दावणगिरि
१२. संघवी दीपचंद वीरचंदजी
शा. वीरचंद असलाजी एण्ड कं., चामराजपेट - दावणगिरि
१३. मीलापचन्द सूरचन्दजी, वियजवाडी चीराबजार -मुम्बई
१४. भूरमलजी मूलाजी गोल उमेदाबाद (बेंगलोर)
१५ फुटरमल जेठमलजी बेद, बांकली - (राज.)
१६. समीरमल विजयचंद निमाणी - सोलापुर
१७. इन्दरमल लेखराजजी (राज. हरजी)
१८. महेन्द्रकुमार श्री श्रीमाल बालड (मद्रास)
१९. धन्नबाई सुभाषचन्द्रजी रायसोनी, हिंगोली (महाराष्ट्र)
२०. पुखराज समीरमल कोचर की पुण्यस्मृति निमित्त... मोतीचंद पुखराज कोचर, सोलापुर
२१. स्व. मातोश्री तुलसीदेवी देवीचंदजी वडेरा की पुण्यस्मृति निमित्त... ह. रमेश वडेरा, वर्धमान केन्व्हासिंग एजेन्ट ए, ३७. श्री सिद्धेश्वर मारकेट यार्ड, सोलापुर . Off. : 323053, Resi. 323643
२२. बाबुलालजी अमितचंदजी, नागोत्रा - सोलंकी - भीवंडी (बालवाडा वाला)
२३. छगनलाल चुनीलालजी कवाड - सोलापुर (राज. मोकलसर)
२४. केवलचंदजी मांगीलालजी बाफणा - नंदुरबार (राज. मोकलसर)
२५. शंकरलाल मोहनलाल कोठारी - सोलापुर
२६. धेवरचंदजी फुसाजी (राज. सरत)
२७. शा खीमचंदजी धरमचंदजी गुंदेचा - राज. साथु
२८. चांदमल जवानमल मुनोत - सोलापुर (राज. राणावास)
२९. शा रीखवचंद पूनमचंद - सोलापुर
३०. अलका मीयांचंद -कोईम्बतुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावपूर्ण रंगीन चित्रों के साथ, राजगृहकी कई घटनाओंका आलेखन
अद्वितीय शैलीमें, जो बालक युवक सभी के लिए उपयोगी पुस्तक.....

एक सफर..... राजधानी का

शुभाशिष :

आध्यात्मयोगी आचार्यदेव श्रीमद् विजय कलापूर्ण सूरीजी म.सा.

अनन्योपकारी पू. गुरुदेव श्री आनंदवर्धन विजयजी म.सा.

लेखक :-
मुनि आत्मदर्शन विजय म.सा.

मूल्य : ४०(चालीस) रुपये.

प्राप्तिस्थान :

श्री पार्श्वनाथ जैन पुस्तक भंडार, फव्वारे के पास, तलेटी रोड, पालीताणा - ३६४ २७०

श्री पार्श्वनाथ जैन पुस्तक भंडार. नवी जैन धर्मशाला के सामने, ता.समी, वाया हारीज, मु.शंखेश्वर.

श्री महावीर जैन उपकरण भंडार (शंखेश्वरवाले), गोपीपुरा, सुभाषचोक, मेन रोड, सुरत - ३९५ ००१.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभार...

समयकी संक्षिप्ता होते हुए भी मेरी विनंतीको स्वीकार कर प्रस्तुत पुस्तक का सूक्ष्म निरीक्षण किया और इच्छाकार सामाचारीको जो तरीकेसे मान दिया इसके लिए पू. पंन्यास श्री अभयशेखर वि. गणि का मैं आभारी रहूँगा। आपश्रीने कितने सूचन किये, जो सुधार लिया, और सूचना अनुसार कथा वस्तु स्वयं देख लेनेके लिए आपने मेरा ध्यान दौरा।

कथामें अनेक मतांतर तो रहेगा ही, कितनी कथाएँ ग्रंथ-आधरित होती हैं तो कितनी परंपरागत होती हैं। कथाको मुख्य न रखते हुए कथा-सारको लक्ष्यमें रखकर तद्नुरूप प्रयत्नशील बनें, ऐसी वाचकगणके पास रखी हुई अपेक्षा अस्थाने नहीं गिनी जायेगी...।

तदुपरांत घटनाएँ सत्य होते हुए भी घटनाओंको रससभर बनाने के लिए कितने घटनास्थलोंको कल्पनाकी कलमसे आलेखित किया है। जैसे कि जंबूकुमारकी घटना सच होते हुए भी ''जंबूमहल'' काल्पनिक है। हो सकता है कि ''जंबू-महल'' उस समयमें इसमे भी विशिष्ट हो... या न भी हो... इसी तरह मेतार्य, अनाथी मुनि आदि घटनास्थलोंके स्तूपके लिए समझ लेना।

शास्त्रज्ञोंके हेतु विरुद्ध कहीं भी लिखा हो तो सादर विनम्रभाव सह ''मिच्छामि-दुक्कडं''

- आत्मदर्शन विजय -

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्वद्वर्यकी कलमसे...

श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः

श्री प्रेम-भुवनभानु-धर्मजीत-जयशेखरसूरीश्वरेभ्यो नमः

एक चित्रमें शतशः शब्दों का सारांश आ जाता है।

इस लोकोक्तिने चित्र की महत्ता दर्शायी है। तो भी यह अल्पोक्ति है, ऐसा बहुत बार लगता है। श्रुतिगोचर शब्दों के माध्यमसे जो प्राप्ति होती है, इसे भी कई ज्यादा प्राप्ति दृष्टिगोचर-दृश्यकी ओर एक नज़र रखते ही हो जाता है -

जैसे कि किसीने कहा की 'यहाँ एक पुस्तक है'... यह सुनते ही हमें कुछ बोध होता है। फिर दृष्टि घुमाते पुस्तक भी देखा, इसी समय बाह्य मनमें तो 'यहाँ' एक पुस्तक है' इतना ही विचार उत्पन्न हो गया फिर भी अंतरमनमें तो कई दृश्यने घेरा डाल दिया है, जो बादमें कोई यह पुस्तक के बारेमें कुछ प्रश्नों की पूछताछ करते है, जिनके दिये हुए उत्तरसे मालुम होता है।

जैसे कि वह पुस्तक कौनसे रंगका है ? ऐसे कोई पूछे तो, ('यहाँ एक किताब है' इतना सुना है तो कुछ जवाब दे सकते नहीं, लेकिन) पुस्तक दिखा हुआ, होनेसे तुरंत जवाब देते है कि यह 'ब्लु कलरमें है' या 'लाल रंगमें है' या तो 'फोरकलर टाइटल-पेजवाली (किताब) है'... आदि. इसी तरह यह कौनसी साइझमें है ? कितनी मोटी है ? किस तरहकी बाईन्डिंगसे युक्त है ? मेजपर है या बुकशेल्फमें है या अन्यत्र कहीं है ? यह मेज कैसा है ? कौनसे कलरका है ? इस मेजपर दूसरी कोई बुक है या नहीं ? पुस्तक स्वच्छ है या कितने दिनोंसे मिट्टी खा रही है ? ऐसे अनेक प्रश्नों के उत्तर हम इसी वक्त व्यक्तरूपमें कुछ भी न सोचे हुए भी स्पष्टरूपसे निःसंदेहरूपसे दे सकते है, यह बता रहें है कि जो एक ही नज़रके घूमानेसे इसके द्वारा यह पूर्णरूपवाली जानकारी होते ही अंदर (मनमे) नोंद हो चुकी थी, इतना बोध शब्दके माध्यमसे पाना हो तो कितने शब्द बोलना होता है ? और आंखोंसे पाना हो तो ? एक नज़र ही मात्र घुमाना....!

बोध करानेमें आंखोकी यह चमत्कारी असरकारकता ही क्रिकेट मेचकी रनिंग कोमेन्टरीसे भी जीवंत प्रसारणको ज्यादा रसप्रद बनाती है ! श्राव्य माध्यमसे भी दृश्य माध्यम (T.V.) पर जाहिर खबर की दर बहुत ज्यादा होते हुए भी सभी कंपनीवाले अपने बोगस मालकी बिक्री के लिए इनको ज्यादा पसंद करते हैं।

आंखकी बोधप्रदता के इस विशाल फलकका उपयोग सद्बोध हेतु प्राप्त करने की सोच हितेच्छु सुज्ञको भी आयेगा ही, यह स्पष्ट है। स्व. पूज्यपाद गुरुदेव आ. भ. **श्री विजय भुवनभानुसूरीश्वरजी म.सा.भी** चित्रोंकी बोधप्रदताको पहचानकर कई साल पूर्व प्रायः प्रथम ही बार शासनपति श्री महावीर प्रभुके जीवनके चित्र, बालकों के लिए देव गुरु धर्म संबंधी चित्रावली, ''प्रतिक्रमणसूत्र-चित्र-आल्बम'' आदिकी भेट श्री जैन संघको अर्पण की। पुराने उपाश्रय और कई श्रावकोंके घरोंमें, आदोनी-संस्थाकी ओरसे जो प्रकाशित हुए काचकी फ्रेममें जडे हुए भी शालीभद्र, श्री स्थूलभद्रजी, आदिके संक्षिप्त विवेचनवाले रंगीन चित्र दिखने में आते है। उसीमें भी अनमोल मार्गदर्शन स्व. पूज्यपाद गुरुदेव का था। और इनकी तो शास्त्रपरिकर्मित प्रज्ञा सह सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति थी। अर्थात, कथाचित्र में जिनका महत्त्व न हो ऐसी भी कोई गलत हकीकतकी नोंद दृष्टा का मन न हर ले, इसकी भी पर्याप्तिरूपसे दरकार की। अन्यथा कभी ऐसा भी हो जाता है कि किसी साधु भगवंत के दृश्यमें रजोहरण दाहिनी साईडकी ओर दर्शाया हो, दृष्टि भूमि पर न बताते इधर-उधर दर्शाइ हो, दंडा और तरपणीको घासपर रखे हुए दर्शाते है। ऐसे-वैसे चित्रोंमें इस बाबतका कोई भी महत्त्व न होते हुए भी चित्रके मार्गदर्शक को इसका ख्याल करना आवश्यक ही है। वरना दर्शकोंके लिए गलत मान्यता अपनानेकी पूरी शक्यता है। क्योंकि दृष्टि के माध्यम से इन सबकी नोंद ली जाती है।

अध्यात्मयोगी पूज्यपाद आ.भ .श्रीमद्विजय कलापूर्ण सू.म.सा.के शिष्य मुनिराज श्री आत्मदर्शन वि. ने भी मुख्यरूपसे बच्चोंको बोध मिले, यही दृष्टि सामने रखकर श्री जिनशासनमें प्रचलित और राजगृहमें घटित घटनायें राजू और संजू नामके दो काल्पनिक पात्रके माध्यमसे रंगीन चित्रोंके साथ सरल भाषामें प्रकाशित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। यह सचित्र कथाएँ अनेक जिज्ञासुओंको अनेकविध बोध देगी ही यह निःसंदेह बात है। भावुकगण, उनके परिश्रम को सफल करें... ऐसी अपेक्षा रखता हूं।

- पं. श्री अभयशेखर वि. गणि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलमके सहारे....
राजगृहीका सफर....

मुंबई (सेन्ट्रल) से जा रही ''राजधानी एक्सप्रेस'' से होते सफरकी बात यहाँ नही है और भारतकी राजधानी दिल्ली या लंदन जापान या अमेरिका - न्युयॉर्कके सफर की बात भी यहाँ नहीं हैं।

यह सफर है...

२५०० साल पूर्व मगध (M.P.) की राजधानी राजगृहका...

राजगृही नगरी यानि क्या ? यह पूछते हो ?

सुनो तब...

राजगृही याने -

- वर्तमान चोविशीके बीसवें तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रतस्वामिके (निर्वाणके सिवा) चार चार कल्याणकोंकी महान **कल्याणक भूमि।**
- आसन्न उपकारी परमात्मा महावीर देवकी कर्मभूमि और **धर्मभूमि।**
- गौतमादि गणधर भगवंतोंकी **निर्वाणभूमि** (वैभारगिरि)।
- प्रभु महावीरके चौदह हजार मुनिओ में उत्कृष्ट धन्ना-अणगारकी अंतिम **समाधि-भूमि।**
- प्रभु महावीर के परमभक्त मगधसम्राट श्रेणिककी **राजधानी।**
- जंबुकुमार जैसे महाब्रह्मचारी महापुरुषों की **जन्मभूमि।**
- धन्ना-शालिभद्र जैसे महाऋद्धिमानों के त्यागकी यशेगाथा गाती **त्यागभूमि।**
- अर्जुनमाली जैसे खुंखार खूनीको भी मुनि बनानेवाली **संयमधरा।**
- महाशतक जैसे महाश्रावकों की **पुण्यभूमि।**
- नंदिषेण, मेतार्य और मेघकुमार जैसे महामुनिओंकी **मातृभूमि।**
- पुण्यवंता पुणिया श्रावककी **सामायिकभूमि।**
- अमरकुमारकी नवकार कहानी सुनानेवाली **धर्मधरा।**
- चेलना और सुलसा जैसी महासतीओंसे सुशोभित **रत्नभूमि।**
- मन का मूल्य समझाती हुई राजर्षि प्रसन्नचंद्रकी **कैवल्यभूमि।**
- प्रभव जैसे महाचोरको भी महावीरकी तीसरी पाट पर स्थापनेवाली **वसुंधरा**
- नंदमणियार जैसे मानवोंका पतन और उत्थानकी कडी बतानेवाली **ऐतिहासिक नगरी।**
- धन और धर्म, लक्ष्मी और सरस्वती इत्यादिक समन्वयसे सर्जित **धन्यधरा...** और
- चतुर्विध संघके ज़ाज़रमान पुन्यसे तप्त **तपोभूमि।**

सामान्यतः, वणिकजन भी सामान्य मुनाफा देखते हुए इसी ओर दौड़ते है, तो प्रभु वीर बनिये के (जो कि सबके) गुरु हैं नहीं, बल्कि भगवंत थे। इनको आध्यात्मिक मुनाफा (लाभ) ज्यादा दिखा तो विशिष्ट **विहारभूमि** के रूपमें ''राजगृही'' को पसंद किया यह छोटे बालकको भी समझमें आने जैसी बात है। इसमें कोई आश्चर्य नही है।

चलो, राजगृहीकी कुछ नयी-पुरानी घटनाओंको करीबसे देखेंगे। इसके लिए राजगृहीकी चारों ओर परिकम्मा लगानेवाले राजू और संजू नामके दो काल्पनिक पात्रोंको भी नज़रके सामने से न हटायें।

आइये ! **सभीको हार्दिक आमंत्रण है... राजगृहीकी भावयात्रा पर पधारनेका....!**

योगि - पाद-पद्मरेणु
मुनि **आत्मदर्शनविजयजी**

कोईम्बतुर-२०५३.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजधानी के प्रथम द्वारकी ओर...

- पहचानिये... मित्र-युगलको
- अलख निरंजन...
- जा साले, अबसे तेरा मुँह मत दीखाना...
- ले... लेती जा ये धनलाभ...
- श्रेणिक के मृत्यु स्थल मित्र-बेलडी...
- मगध का मालिक दौडा... पुणियाकी कुटीयाँ पर...
- राजधानी में १२६० मनुष्य के शब गिर पडे...
- श्रेणिक के सम्यक्त्व स्थल.. मित्र-युगल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहचानिये... मित्रयुगलको

जगृही के मार्ग... और राजमार्गों पर मंद चहल-पहल शुरु हुइ।

सूर्यनारायणकी सवारी आने में अब ज्यादा वक्त नहीं था।

खेडूत... गो-पुच्छों को मरोडते खेतोंकी ओर दोड रहे थे।

मस्तक पर घडा रखती हुई आ-जा करनेवाली पनिहारीयों की मंगल श्रेणि भी नयनगोचर हो रही थी।

देवालयो, महालयो और राजमंदिर भी जनताके धीरे पगरवसे गुंज रहे थे।

मंदिरोमें घंटनादकी गुंजनाद गुंज रही थी।

यही नगरीमें राजू और संजूका मित्र-युगल भी बसा था।

दोनों मित्र आज प्रभातसे ही राजगृही नगर के सेरसपाटे पर निकल चुके थे।

''राजु याने तत्त्वदर्शी''
''संजु याने तत्त्वरसी''

देखते ही रहीये जैसे गुरु-शिष्यकी जोड़ी...।

राजु जैसे तत्त्ववेत्ता था, वैसे इतिहासका भी प्रखर विद्वान था।

कहनेका मन हो जाता है कि राजगृह नगर याने प्राचीन और अर्वाचीन इतिहाससे पूर्णरूपेण भरा हुआ नगर...

राजुने जैसे अर्वाचीन इतिहास साक्षात् नजरोंसे देखा था वैसे प्रभु महावीरके समयका इतिहास भी दादाके पाससे कानोक सुना था।

इनके दादाजी प्रभु महावीरके साक्षात् दर्शन पानेवाले बडभागी बने थे।

इससे प्रभु महावीर के समयमें दादाजीने साक्षात् नजरोंसे देखी हुई हकीकतोंको भी वह अच्छी तरह जानता था।

बहोत दिनोंसे संजू की यह ऐतिहासिक घटनास्थलोंको जानने-देखनेकी उत्कंठा आज पूर्ण होगी ऐसा लगता था।

अभी तो मुंछके बाल आ रहे है ऐसे नवयुवान दोनों किशोर राजगृही के प्रथम द्वार की ओर प्रभातमें ही चल पड़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलख निरंजन...

अ

भी तो कुछ चले ही होंगे तो वहाँ एक विष्णु मंदिर आया। सहसा राजू के मुंहसे निकल गया... इस मंदिरमें अपने गुरु भगवंतको बंद कर दिया था...।

हैं...!!! संजू बोला, हाँ... सुन...!!!

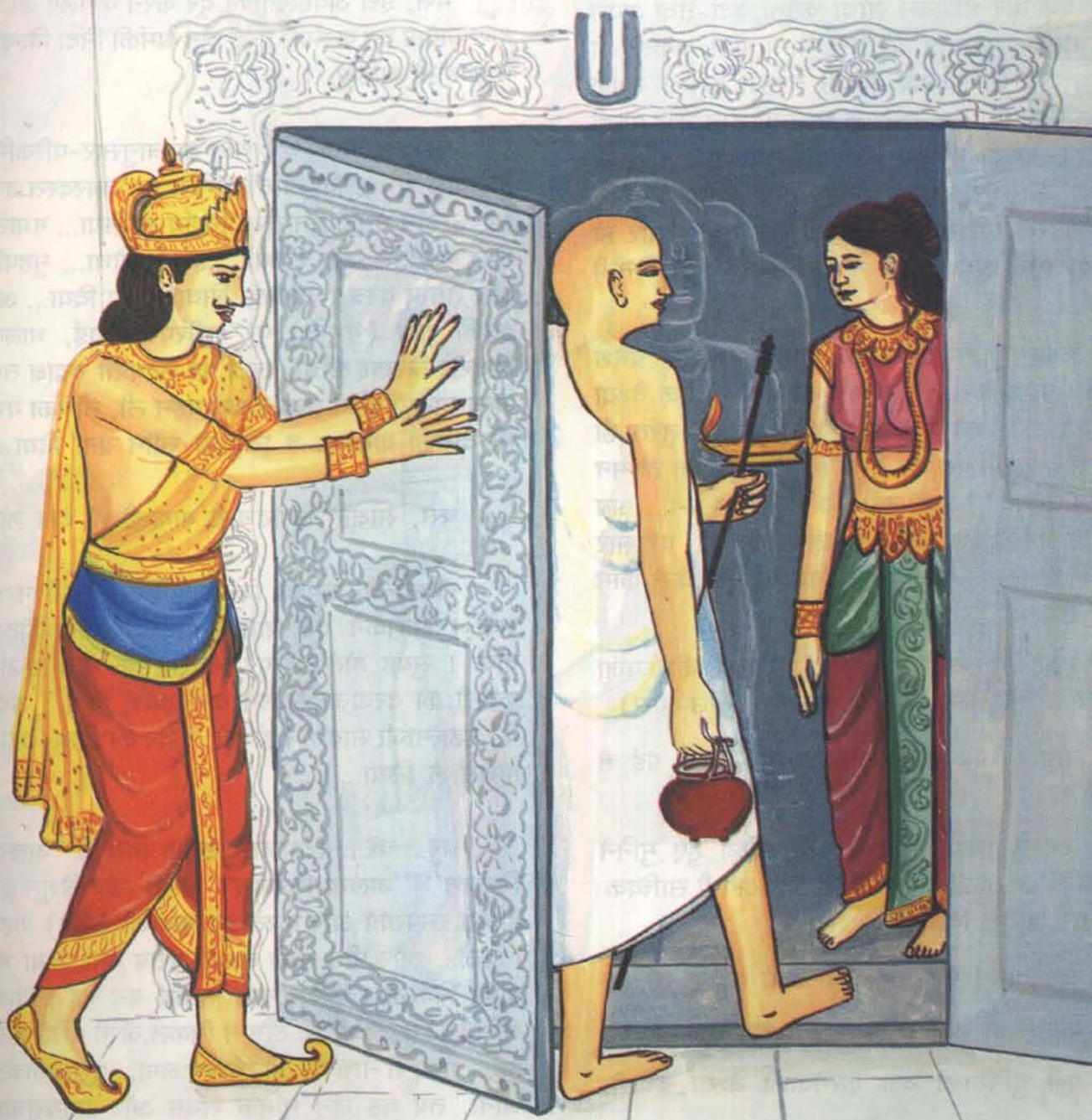

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा श्रेणिक अभी तो जैन धर्म नहीं पाया था, और बौद्ध धर्मका कट्टर उपासक था, उस समयकी बात है । श्रेणिककी पटराणी चेलणा पियरसे ही समकित पाकर आई थी और कट्टर जैन धर्मी थी । जबकी श्रेणिक कट्टर बौद्ध धर्मी । दोनोंके बीच अपने धर्मके लिए कितनी ही बार वाद-विवाद होते थे । आमने-सामने आ जाते, और झगड़े भी हो उठते ।

एक बार श्रेणिकने सोचा चेलना यदा-तदा अपने जैन धर्मकी महानता के लिए गाना गाते थकती ही नहीं । अब तो एकबार अच्छी तरहसे इसको सबक सीखाना होगा । बस, श्रेणिक ने मनमें ठान ली, मनही मन एक नाटक भी रच दिया । उन्होंने एक वेश्याको बुलाया, और पूरा नाटक समझा दिया, इतना ही नहीं, इस मंदिरके पाससे एकबार एक जैन मुनि पसार हो रहे थे, तभी खुद राजाने मंदिरमें पधारने की विनंती की ।

महात्माजीने तो सरल भावसे मंदिरमें प्रवेश किया । प्रवेश करते ही राजाने तो पीछे से एक वेश्या (हलकी स्त्री) को भी धकेल दीया । और तुरंत ही बाहरसे दरवाजा बंद कर दीया । साथ ही राजा तो मन ही मन आनंद से झूम उठे... और सोचने लगे... अब तो जैन धर्मकी पुंछ बनी हुई चेलणा ही नहीं, पर सारे नगरकी जनताको मालुम होगा कि जैन मुनि कैसे काम करते है !

सुबह हो इतनी ही देर है । बौद्धधर्मकी ध्वजा लहरायेगी और जैन धर्म का धजागरा (-उपहास)

वाह ! अब तो चेलना सचमुच फँस गई है न...???

जब की यहाँ, मंदिरमें प्रवेश किये हुए मुनिने वेश्याकी ओर तीखी दृष्टि से देखा और अपनी सात्त्विक जबानसे आदेश दिया...

खबरदार ! एक कदम भी आगे बढ़ाया तो... !

कोनेमे ही बैठी रहना, वरना खैर नहीं...।

पूरी दुनियाको वश करनेवाली वेश्या बेचारी, मुनिके आदेश से बिल्कुल घबरा गई... मुनिके वचनों के वशसे कोनेमें ही बैठी रही । कुछ भी ना कर सकी । मुनिको राजा के नाटक की गंध आ गई । प्रभात होते ही जनसमूह के बीच दरवाजा खुलेगा और वेश्या के साथ जैन मुनि भी बाहर निकलेंगे तब तो जिनशासनकी कैसी भयंकर अपभ्राजना होगी ?

बस, इस अवहेलनाको दूर करने के लिए जो भी करना होगा वह करूँगा, परंतु जैन धर्मकी निंदा बिल्कुल नहीं होनी चाहीए...।

महात्मा गीतार्थ थे अर्थात् शास्त्रानुसार-परिकर्मित बुद्धिवाले थे । इनका पांचो इन्द्रिय पर जबरदस्त काबू था, उन्होने मनही मन तुरंत निर्णय ले लिया... गभारेके गोख में दीया जल रहाथा... इसमें ओधा... मुहपत्ति और तमाम वस्त्र (चोलपट्टा सिवा) जला दिया... और इनकी राख (भभूति) पूरे शरीरपर लगाई, भालपर सिंदुरसे त्रिरेखा खींची, खूंटी पर लटकती रुद्राक्ष तथा अन्य मालाएँ गलेमें तथा हाथमें पहन ली, नीचेका वस्त्र भी दीयेकी कालीख व सिंदुरसे रंगीन बना दिया ।

बस, साक्षात् लंगोटधारी बाबाजी ही देख लो ।

जैनमुनिके रूपकी किसीको कल्पना भी न हो सके । श्रेणिकने एक रातके बीचमें ढिंढोरा पिटवा दीया । सुबह होते ही पूरे जनसमूहके बीच राजाने पुजारी को दरवाजा खोलने का आदेश दिया... अंदर बैठे महात्माजी सावधान हो गये, मंदिर का त्रिशूल अपने हाथमें ले लिया...

चर्र... चर्र... दरवाजा खुलनेके साथ ही **''अलख निरंजन'' ''अलख निरंजन''** बोलते और त्रिशूल को हाथसे ऊपरकी और करते हुए बाबाजी (मुनि) बाहर निकले... और पीछे पीछे बेचारी गरीब बनी वेश्या भी बाहर निकली । पूरी जनता साश्चर्य बन गई । राजा श्रेणिकको काटो तो भी खून न निकले जैसी परिस्थिति हुई... शरम से नीचे की ओर देखने लगा... पूरी हकीकत जानी, तब वह जैन मुनिके संयम और समयसूचक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चालाकी पर मन व मस्तिष्क समेत झूक गया। चेलणाकी खुशी तो और बढ गई, इसकी धर्मश्रद्धा भी ओर बढी... इतना ही नहीं, श्रेणिकने तबसे जैन धर्मकी हँसी उडाना छोड़ दिया।

राजूने बात पूरी की तब तो (दोनों) ठीक ठीक आगे बढ़ गये थे। संजू भी भूतकालकी इस इतिहासकी गहरी नींद से जैसे जागृत हुआ हो ऐसे सभान अवस्था सह चलने लगा। किन्तु, वह ''अलख निरंजन'' मुनिका दृश्य उसकी नजरसे हिलता नहीं था।

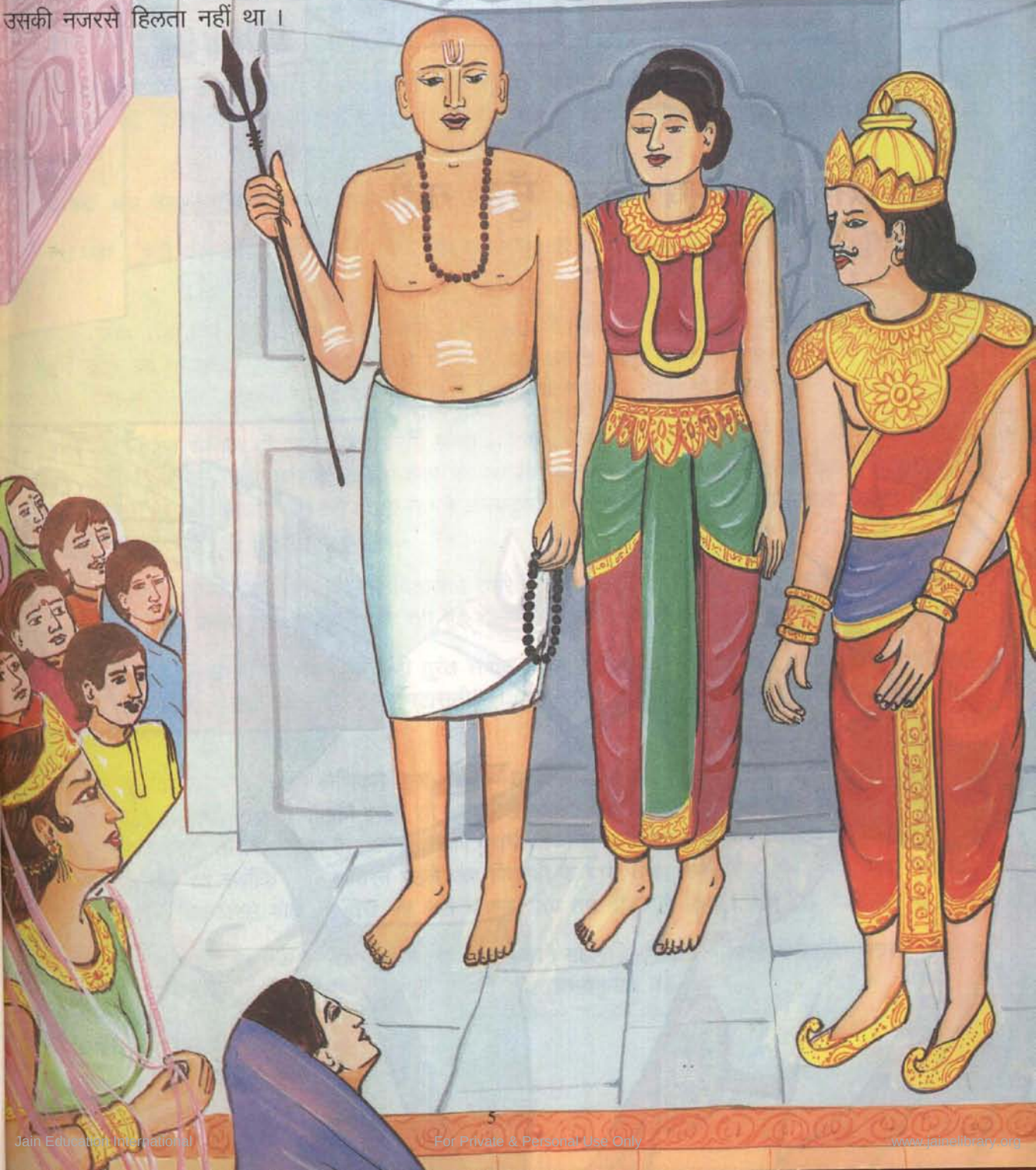

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जा साले ! अब तेरा मुँह नही दिखाना...

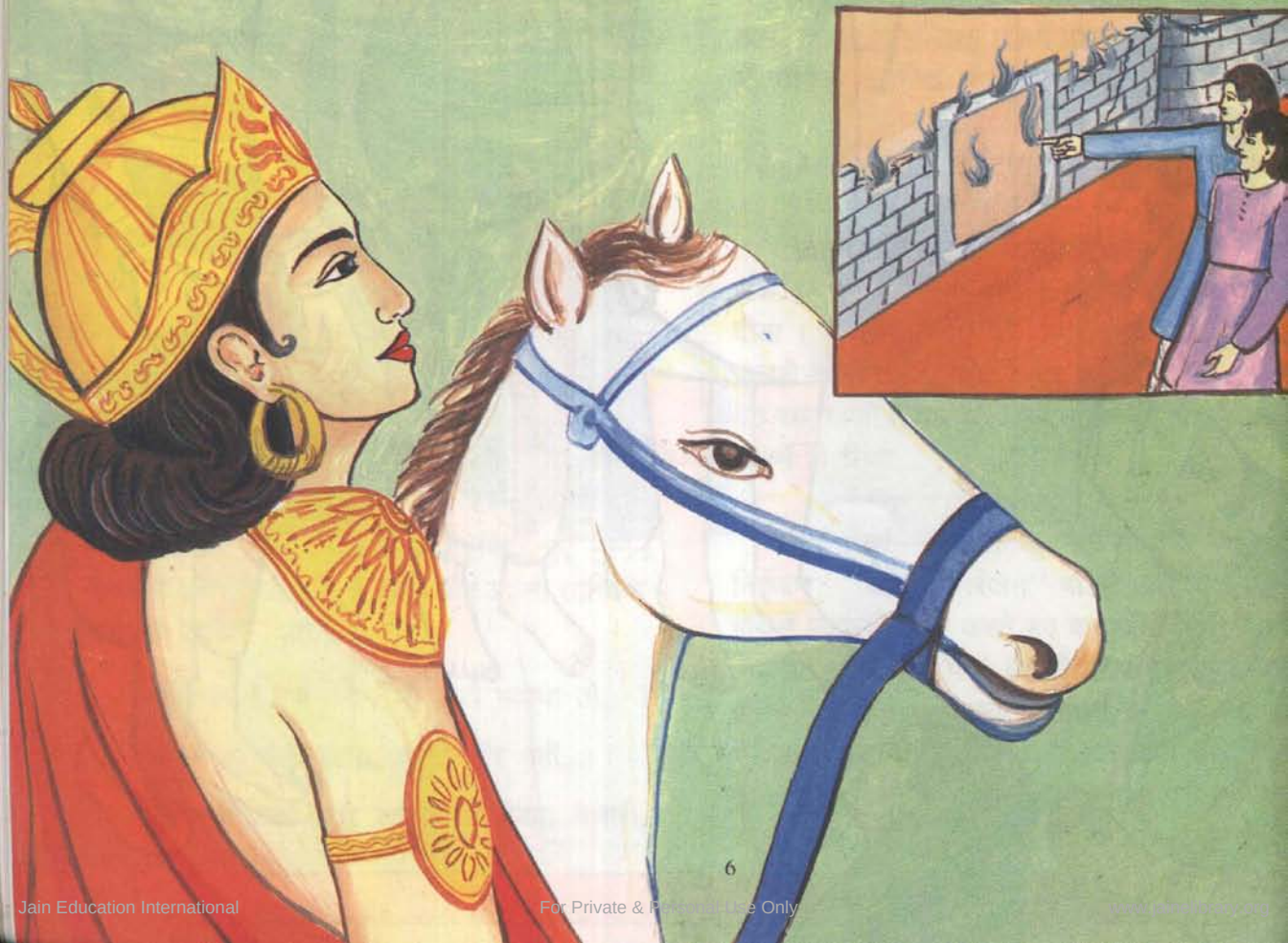

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रद्वयकी नगरयात्रा आगे आगे बढती ही रही । थोड़े ही चले होंगे तो वहाँ दूरसे काष्ठकी जालीओंसे बनी हुई अर्धदग्ध विशालकाय कोई शाला दिखनेमें आयी ।

थोडे नजदीक जाकर संजूको परिचय देते हुए राजु बोला... राजा श्रेणिककी यह हाथी-शाला थी, बराबर देख..., दिखते है न बड़े बड़े आलान-स्तंभ ?

हाँ... पर यह जले हुए क्यों दिखते है ?

इनके पीछे (छोटा) इतिहास है... सुन... ।

प्रभु वीर को वंदन करके एकबार चेलणा सहित राजा श्रेणिक, राजमहलकी ओर वापस आ रहे थे । भीषण ठंड़ीके दिन थे, ऐसी ठंड़ी में भी एक महात्मा खुले शरीर, ठंडा हिमसा पवनके झोकोंके बीच भी कायोत्सर्ग ध्यानमें स्थिर खड़े थे ।

श्रेणिक और चेलणा दोनोंके मस्तक झुक गये और महात्माकी अनुमोदना करते करते स्वस्थान पर पहुँचे ।

रात पडी... ठंडी और बढ़ी... अर्धरात्रि में निद्राधीन बनी चेलणाका एक हाथ लिपटी हुई रेशमी रजाईसे बाहर निकल गया ।

हाथ एकदम ठंडा हिम जैसा हो गया । खून जम गया । चेलणाने तुरंत ही अपना हाथ अंदर ले लिया । और सोचमें डूब गई । इतने बंद महलमें भी इतनी ठंडी है हाथ भी बाहर रख सकते नहीं... तो वह महात्माका क्या होता होगा ? और यही विचारमें चेलणाके मुखसे स्वाभाविक ही निकल पड़ा... उनका क्या होता होगा ?

इसी समय राजा श्रेणिक भी जागृत थे । उसने सोचा... जरुर, चेलना किसीके प्रेममें डूबी है... और अपने यारकी चिंता कर रही है... हाय रे... धिक्कार है...! श्रेणिकका मन अत्यंत व्यग्र बन गया... प्रभात होते ही चेलना के सतीत्वकी सच्चाइ जानने वह वीरप्रभु के पास जाने लगे । तभी सामने अभयकुमार मिले... पिता श्रेणिकको उसने नमन किया । श्रेणिकने आदेश दिया जा, चेलना सह अंत:पुरको जला दो...

अभयने सोचा... राजा,बाजा और बंदर... पिताजीने त्वरित निर्णय ले लिया है परंतु अभी सवाल जवाबका समय नहीं है । अभयकुमारने जाकर अंत:पुरकी बाजुमें रही हुई यह पुरानी हस्ति-शाला को आग लगा दी ।

इस तरफ श्रेणिकने प्रभुवीरको नमन करते ही तुरंत सवाल किया... प्रभु ! चेलना सती या असती... ? प्रभुने कहा - चेलणा सती भी नही, असती भी नही, पर ''महासती'' । यह सुनते ही श्रेणीकको चक्कर आने लगा । वह तुरंत घोड़ेपर सवार होकर वापस आये ।

बीच रास्तेमें अभयकुमार मिले । श्रेणिकने पूछा-अंत:पुर जला दिया ? हाँ, पिताजी ! **जा... साले...! अबसे तेरा मुँह मत दिखाना ।** अभयको तो यही बातकी इच्छा थी । उसने प्रभुवीरके पास जाकर प्रव्रज्या ग्रहण की । श्रेणिकने जाकर देखा तो अंत:पुर तो सही सलामत खड़ा है... और पासकी पुरानी जर्जरित गजशाला जल रही है । किन्तु अब अभयकुमार वापस मिले वैसा नहीं था क्योंकि अभयकुमारने पहले जब पिताजी के पास दीक्षा लेने की मांग की थी, तब पिताजीने कहा था कि मैं तुझे धिक्कारसे बोलुं कि तेरा मुँह नही बताना, तब तुम दीक्षा ले लेना । और यह घड़ी आ गई ।

''राजेश्वरी नरकेश्वरी'' राज्यके महारंभ-समारंभ के पापसे बचने महाबुद्धि-निधान, पांचसौ मंत्रीओंके अग्रसर और राजकुमार के जीवन को तिलांजलि देकर सर्वत्यागके पथकी और अभयकुमार का प्रयाण....

संजू तो यह सब सोचता ही रहा...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ले... यह धनलाभ...

सूर्यका रथ आगेकी अ
गति कर रहा था। इस
साथ मित्र-युगल
नगरयात्रा भी अ
बढ़ी।

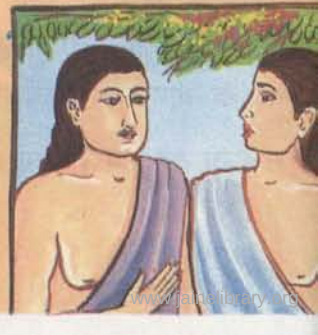

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजमार्गके एक कोने पर खंडहर महेल नजरमें चढ़ा। संजु आगे बढ़ गया जिसका ख्याल ही नहीं आया। अरे... ओ संजू! आगे कहाँ निकल गया ? यहाँ आओ यहाँ आओ... जैसे कि पूर्व घटनाओंकी तंद्रामें से बहार आया न हो, इस तरह संजूने पीछे मुड़कर देखा... तो राजू वही खंडहर महलकी ओर सूक्ष्म नजरोंसे देख रहा था। त्वरित गतिसे वह पीछे लौटा। राजू ! तुम क्या देख रहे हो ? संजू श्रेणिक-पुत्र नंदिषेणका यह राजमहल ! जिसकी नक्शी कारीगरी पूरे राजगृहमें प्रसिद्ध बनी थी। समय समयका कार्य करता है। जैसे खंडित बने है राज-महल ! ऐसे ही खंडित हुए थे राजपुत्रमेंसे महात्मा बननेवाले नंदिषेणके भाव....। प्रभु महावीरकी देशना सुनकर शासन देवीकी मना होते हुए भी तीव्र वैराग्यसे राजकुमार नंदिषेण ने (प्रभु महावीर के पास) दीक्षा ली... संजू ! महात्मा नंदिषेण स्वाध्याय करते थे, बहुत तप भी करते थे। सेवा वैयावच्च तो इनका प्राण था। ध्यान और कायोत्सर्ग भी करते। परंतु काम-वासना इनका पीछा नही छोड़ती। वासनाका कीडा इनके मगजको बार बार डंसता....

राजू ! इतना तप और सेवा होते हुए भी.....?

हाँ, एक तो इनका भोगावली कर्म अभी बाकी था। दूसरे नंबरमें वह भुक्त-भोगी थे। इसीलिए सांसारिक जीवनकी मौज-मस्तीयाँ इनके नजर समक्ष ही घूमती। मुनिजीवनको कलंक न लग जाय, इसीलिए महात्मा नंदिषेण एकबार पर्वत परसे गिरनेके लिए गये कि शासनदेवीने तुरंत बचा लिया। और भोगकर्म भुगते बिना और कोई चारा नहीं है... ऐसी जानकारी दी गई। महात्मा तो गंभीर बन गये। कालानुसार एक बार प्रभु वीर की अनुज्ञा पाकर गोचरी वहोरने गये।

अनजानमें ही किसी वेश्या के घर जा पहुँचे। **धर्मलाभ...** वेश्याने तो तुरंत ही जवाब लौटाया... धर्मलाभ नहीं...यहाँ तो धनलाभ चाहिए...! मुनि बन गये गर्विष्ट. क्या हम निर्धन है ऐसा तु मानती है। **ले... यह धनलाभ...** इतना, कहकर लब्धिसंपन्न मुनीने एक बारीक (तिनका) घासको खींचा... खींचनेके साथ ही साड़े बारह क्रोड़ सोनैयाकी वृष्टि हुई। वेश्या अब कुबेर भंड़ारी जैसे नवयौवन वह महात्माको क्या जाने देगी ? अनेक प्रकारके वचनबाण और हावभावसे मुनिको वश किया। चारित्र वेशसे मुनिका पतन हुआ, परंतु जिनधर्म प्रति अविहड श्रद्धासे वह विचलित नहीं हुए। इनका सम्यकत्व अणिशुद्ध था। त्याग मार्गसे इनका पतन हुआ, पर वैराग्य मार्गसे नहीं... इसी कारण वेश्याके यहाँ आनेवाले सदैव दश व्यक्तिओंको पतित नंदिषेण, प्रतिबोध करके वीर प्रभुके पास दीक्षा के लिए भेजते... संजू ! जरा तो सोच... वेश्याके पास आनेवाले व्यक्ति कैसे होते हैं ? ऐसे भारी हृदयको भी पिघला देनेवाली अमोघ देशना-शक्ति कैसे प्राप्त हुई होगी ? कहना ही पड़ेगा कि पूर्वमें की हुई तप आदि साधनाओंसे यह लब्धि प्रगट (प्राप्त) हुई थी। एक दिन नौ को प्रतिबोध किये, पर दसवां बोध ही पा नही रहा था। बहुत देर हो गई थी। आखिर कामलताने (वेश्याने) थोड़ी सी मजाक की, आज तो दसवें आप ही... ! नंदिषेणजीका भोगावली कर्म खतम हो चुका था। तेजीको तो टकोर ही बस...। वे सावधान बन गये। बस, जा रहा हुँ... इतना कहकर सहसा सीढ़ी उतर गये और प्रभु वीरके पास पहुँच गये... फिरसे दीक्षा लेकर, प्रायश्चित्त करके आत्म-कल्याणको पाये। संजू ! कर्म-जोर के कारण कमजोर बने हुए नंदिषेण का पतन तीन कारणोंसे हुआ।

(१) मुख्य कारण तो इनका भोग-कर्म ही निकाचित था।

(२) दो साथमें जाना चाहिए, जब अकेले ही भिक्षा लेने गये।

(३) गर्विष्ट बनकर तपोलब्धिसे सोनैयाकी वृष्टि की, इस प्रकारके अहंकारकी जरुरत ही नहीं थी। अहंकारसे भी पतन हुआ।

इतने वक्त तक शांतिसे सुन रहे संजूने मौन तोडा... जो कि इनकी पदयात्रा तो अविरत चालु ही थी। इसने राजू से पूछा - राजू ! श्रेणिकको कितने पुत्र थे, कितनी रानीयाँ थी ? संजू ! राजा श्रेणिक के अनेक पुत्र थे। इसमें मेघकुमार हल्ल, विहल्ल आदिने दिक्षा ली थी। तेईस पुत्र तो संसार की सर्वोत्कृष्ट-समृद्धि-धारक अनुत्तर विमानवासी देव बने। दश पौत्र देवलोकमें गये। श्रेणिककी तेईस रानियाँ तीव्र तप करते करते मुक्ति में गई है। आह ! ऐसा उत्तम राजकुल ! संजु सहसा बोल उठा ! हा... क्या बात करूँ संजू ! खुद राजा श्रेणिक और इनके पौत्र उदायी, दोनों भावी तीर्थंकरके जीव हैं।

एक ही घरमें दो तीर्थंकरके जीव उत्पन्न हुए। दादा और पोता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजु! अभी श्रेणिक का जीव कहाँ है? संजु ! श्रेणिकका जीव अभी प्रथम नरकमें समभावसे दु:ख सहन कर रहा है।

नरकमें? संजू के मुँहसे चीख निकल गई... किन्तु, इतनेमें तो... दूर... थोड़े दूर बड़ी बड़ी दीवालें इनके दिखनेमें आयी... जो मजबूत व बड़े पत्थरोंसे बनी हुई थी। थोड़े नजदीक पहुँचे पश्चात् भारी लोहेके सरियेसे जडित दरवाजे भी देखने को मिले। अंदरकी ओर अंधेरा था... तो भी छोटी खिड़कीसे अंदर अल्प प्रकाश जा रहा था। राजूने संजूको अंगुलीनिर्दिष्ट की। राजगृहका यह विशाल कैदखाना है तथा मगधपति श्रेणिकका यह मृत्यु स्थल है। संजूके दिलमें तो आश्चर्यश्रेणी सर्जित हुई। मगधके सम्राटका मृत्यु इस कैदखानेमें ?

हा संजू! जिसने इस कैदखानेका सर्जन किया, इनका ही यहाँ विसर्जन हुआ। चेलनाके पुत्र कोणिकने राज्यलोभमें पिता श्रेणिक को इसी कैदखानेमें कैद किया। इतना ही नहीं नमकके पानीमें भिगोकर रखे हुए चमडेके चाबुकसे वह रोजके १०० (सो) फटके खुले शरीर पर लगवाता था। राजा श्रेणिक प्रत्येक फटके पर ''वीर''... ''वीर''... बोलकर फटके को सहन करनेकी शक्ति प्राप्त करते थे। संजू! जब कोणिक, चेलणा के गर्भमें था तब चेलणाको श्रेणिकका मांस खाने का दोहद (ईच्छा) हुइ थी। इसलिए चेलणाको ''खुदका गर्भ इसके पिता का शत्रु बनेगा'' ऐसी गंध आ गई। इसीलिए कोणिकका जन्म होते ही चेलणाने उसे अपनी दासी द्वारा गुप्तरूपसे कुडेमें डलवा दिया। कैसे भी श्रेणिक को इस बातका पता लग गया। इसने नवजात पुत्रको मंगवा लिया। और चूमीयाँ व प्यारसे स्नान कराया। इसकी (हाथकी) कोनीपर कुकड़ेने कुछ ईजा पहुँचानेसे इसका नाम कोणिक रखा। हमेंशा सो चाबुक मारने का आदेश देनेवाले कोणिकको चेलणाने जब यह बात बताइ तो कोणिकको अपने अपकृत्यके लिए जबरदस्त दु:ख लगा। इतना ही नहीं... क्षणका भी विलंब किये बिना खुद ही लोहेका धन उठाकर केदखानेकी जाली तोडकर पिताको केदमुक्त करने के लिए गया। श्रेणिकने दूरसे ही कोणिकको आते हुए देखा। इसने कल्पना की कि कोणिक आज अत्यंत गुस्सेमें आकर मुझे मारने के लिए आ रहा है। इसको पितृ हत्याका पाप न लगे और खुदकी असमाधि न हो जाय इसलिए इसने अपनी अंगूठीका जहरी हीरा चुसकर सदा के लिए जीवनका अंत कर दिया। परंतु अंतिम समयमें शुभध्यानसे वह विचलित हुए दुर्ध्यान द्वारा प्रथम नरकमें जा पहुँचे।

संजू के देहसे हलचल पसार हो रही थी। राजू बोला :

संजू! ''जिसका अंत अच्छा उनका सब अच्छा, मगर, जिसका अंत खराब उसका सब खराब'' संजू! कर्म जब सिर उंचा करता है, तब पिता-पुत्रका संबंध इसको विघ्नरूप नहीं है, परमात्माके भक्तको भी वह देखता नहीं... राज राजेश्वरोंकाभी वह छोडता नहीं। प्रत्येक श्वासमें प्रभु वीरको याद करनेवाला परम प्रभु-भक्त श्रेणिक भी नरकमें पहुँच गया। बस... इनके मूलमें पूर्वके निकाचित चिकने कर्म ही थे। अज्ञान (मिथ्यात्व) अवस्था में श्रेणिक ने शिकार के लिए जाते एक गर्भिनी हरिनीको निशाना लगाकर तीर मारा... एक साथ दो जीवों की कातिल हत्या हुई। गर्भ तो बाहर आते ही तड़पने लगा... उसी वक्त श्रेणिक मूछ पर हाथ रखकर बोला : देखों मैने कैसे एक ही तीरसे दो जीवोंका शिकार किया...। पाप करने के पश्चात् पश्चात्ताप करनेसे बचनेकी शक्यता है... परंतु पाप करने के पश्चात् पापकी प्रशंसा (अनुमोदन) करना याने पापको घट्ट बनाना। श्रेणिक ने हत्या करने के बाद पश्चाताप की जगह पापकी प्रशंसा की। जिससे पाप वज्रकी तरह कठित हो गया। वह कर्म जैसे उदयमें आया की तुरंत भाविमें तीर्थंकर बननेवाले श्रेणिकको भी पहली नरकमें जाना पड़ा। संजूको कर्म-गणित समझाते हुए राजू आगे चला...। लेकिन, राजू! परमात्मा महावीरदेवने राजा श्रेणिक नरकमें जाये नहीं, ऐसा कोई रास्ता नहीं दिखाया ? बताया था, राजू बोला। श्रेणिकको जब नरकगमन का पता चला तब वे प्रभु महावीर के पास व्याकुल होकर नरक निवारण कैसे करना ? वह पूछने लगा ! तब प्रभुने इसको दो-तीन तरीके दिखाये। श्रेणिकको कहा - जा, तेरी ही यह राजगृही नगरीमें कालसौरिक कसाई रोजके पांचसौ (५००) भैंसोकी कतल करता है। इसे एकदिनके लिए रोक दे तो तेरा नरकगमन दूर हो जायेगा। श्रेणिक तो अतिहर्षित हो गया। यह कसाई तो मेरी ही प्रजाजन है। वह क्या मेरी बात नहीं मानेगा ? जरूर मानेगा। वह पहुँचा कसाईके यहाँ... इतना ही नहीं। उस कसाईको कसकर बांधकर पूरा दिन उल्टे मस्तक कुएँमें रख दिया। फिर दूसरे दिन सुबह जब प्रभुको वंदन करने गये तब प्रश्न किया प्रभु ! अब तो मेरा नरकगमन दूर हुआ न ? प्रभु सस्मित बोले - ना..., रे... श्रेणिक तूने पूरे दिन इसको कुएँमें तो रखा मगर वहाँ के कादव कीचड़ और पानीमें अंगुलिसे भैसों का चित्र बनाकर अपने हाथोंसे मारने लगा। ऐसे मानसिक कल्पना (आकृति) द्वारा इसने ५०० (पांचसौ) भैसोंकी हत्या की है। और मनसे किया हुआ पाप तो सबसे ज्यादा भयंकर-खतरनाक है। यह सुनते ही श्रेणिक तो उदासीन हो गये। इसने प्रभुको कोई दूसरा रास्ता बताने के लिए फिरसे विनती की। प्रभुने इनके आश्वासन के लिए एक दूसरा रास्ता बताया। जाओ श्रेणिक ! इस नगरमें रहनेवाले पुणिया-श्रावकका एक सामायिकका फल ले आओ। तेरा नरकगमन दूर होगा। श्रेणिक तो यह सुनकर खुश हो गया। और सोचने लगा। पुणिया जैसा धर्मात्मा क्या मुझे एक सामायिक का दान नही करेंगे ? जरुर करेंगे।

ain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

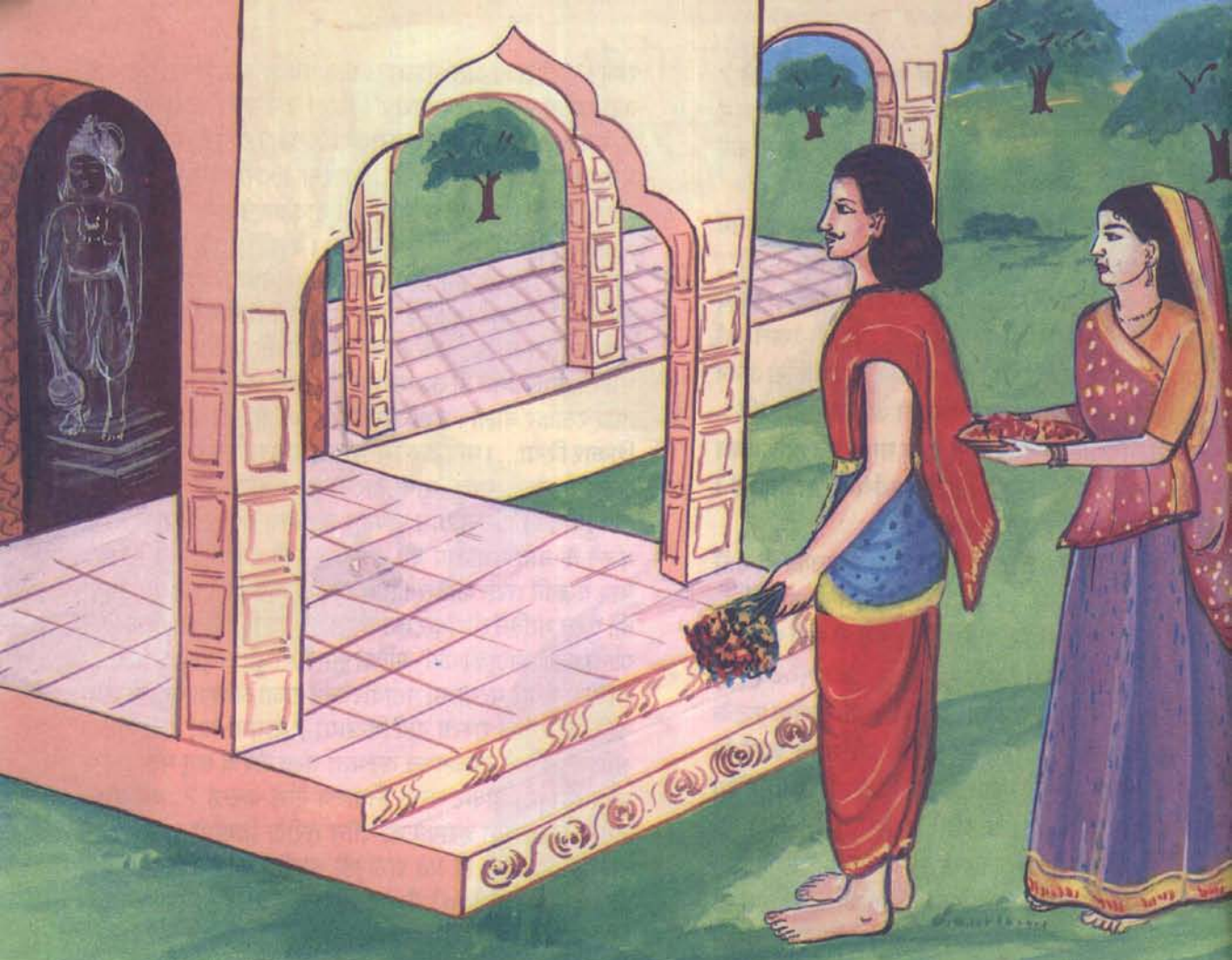

मगधका मालिक दौड़ा... पुणियाकी कुटीयाँ की और...

मगधका सम्राट पहुँचा, आंतरसमृद्धिके सम्राट पुणिया के पास, हा... इसके पास रोज खाने के लिए ए समय का भोजन सिर्फ था। इनका आंगन गोबर मिट्टीसे लिपा हुआ था। इसकी कुटीयाँकी छत देशी नलिये लगाये हुए थे। राजा श्रेणिक ऐसी पुणिया की कुटीया.पर याचकके रूपमें आ पहुँचे क्योंकि पुणिया तो समता और संतोष सुखका बेताज बादशाह था। उसके पास शम-रसकी आनंदमस्तियां (नरेन्द्र और देवोंके पास भी नहीं हो ऐसी) अवर्णनीय थी। श्रेणिकने हाथ लंबा किया। पुणिया... ! एक सामायिक (का फल दे दो। इनके बदलेमें यह मगधका ताज तेरे चरणोमें अर्पण करता हूँ। देखा न... संजू ! कैसी ताकत अध्यात्म-तत्वकी, एक सामायिक की... । एक सामायिक दो और इनकी प्रभावनामें सक्कर या श्रीफल नहीं... परंतु हजारो...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाखों गाँवोका आधिपत्यवाला पूरा मगध देश मिलता है। कौन ऐसा लाभ जाने दे भला ? मगर, संजू...! पुणियाने सस्मित श्रेणिक से कहा राजन् ! सर्वज्ञ कथित यह सामायिक धर्मका फल किसीको दिया नहीं जाता। (दे नहीं सकते ।) यह तो खुद स्वअनुभवका परमतत्त्व है। यदि सामायिक दे सकते है तो एक नही अनेक (सामायिक) देनेकी मेरी तैयारी है। राजन् ! जिनोपदिष्ट यह सामायिक धर्मको पृथ्वीके एक टुकड़ेसे तोलना ठीक नही ।

मगधेश्वर ! आपका साम्राज्य मुझे बिल्कुल नहीं चाहिए। परमात्मा महावीरदेवने एक बार देशनामें कहा था कि... कोई व्यक्ति एक लाख खांडी सुवर्णदान प्रतिदिन करे तो भी प्रतिदिन एक सामायिक करनेवाले का पुण्य (प्रभाव) अधिक होता है। राजन् ! इस सामायिकधर्मसे पैदा होनेवाली आत्मविशुद्धि ... और आत्मविशुद्धिसे प्राप्त होनेवाला अंतरंग आनंद... और इस आनंदके आगे मगधका साम्राज्य तो क्या सारी दुनियाका साम्राज्य भी तुच्छ है। श्रेणिक तो अलख के इस आराधक को देखता ही रह गया। खुद विशाल मगधका स्वामी होते हुए अपनी प्रजा पुणियाके पास बिल्कुल वामन-सा बन गया और निराश होकर प्रभुके पास वापस आया। प्रभुने इसको आश्वासन दिया... श्रेणिक ! कुछ कर्म ऐसे होते है जो-

भुगतनेके द्वारा - सहन करने द्वारा ही दूर कर सकते है। शास्त्रीय भाषामें इनको निकाचित (चिकना) कर्म कहते है... ।

श्रेणिक ! तूने जो गर्भिनी मृगलीको बाण मारा... इन दो जीवोंकी हत्याके पश्चात् तुम बहुत खुश हुए। इससे यह कर्म वज्र-लेप जैसा चिकना (भारी) बन गया। जो तुझे नरकमें जाकर भुगतना ही पडेगा... । मगर चिंता न कर, अगली (Next) चोविशीमें तू मेरे जैसे ही (प्रथम) तीर्थंकर बनकर सिद्धिपद को प्राप्त करेगा। यह सुनते ही श्रेणिकको आश्वासन मिला ।

संजू तो अपने नगरकी एकसेएक बढ़कर रोमांचक और जीवंत घटनाओंको सुनता ही रहा। कर्मके गणितको गिनता ही रहा । पितृ-संतापक कोणिक के बारे में सोचते ही रहा। पुणियाका सामायिक धर्म तो उसको बहुत ही पसंद आ गया। इसने रोज एक सामायिक करनेका निश्चय किया। पुणियाकी वह दो मुँहसे प्रशंसा करने लगा... ।

तब राजू बोला... संजू ! पुणिया के सामायिक धर्म जैसे ही (इसकी) साधर्मिक भक्ति भी अजोड थी। पुणिया पहले तो श्रीमंत सेठ था। किन्तु प्रभु महावीर की देशनामें एकबार परिग्रहको पापोंका बाप (समान) सुनकर दोनों पति-पत्नी हमेंशा एक समय जितना खा सके इतना ही कमाना ऐसा नियम किया। और सभी लक्ष्मीको सातों क्षेत्रमें दे दिया। वह रोजके दो आना कमाते। इसमें दोनोंका एक समयका भोजन प्राप्त होता। रुईकी पुणी बेचते थे, इसपर इनका ''पुणिया'' नाम (प्रचलित) हुआ ।

एकबार प्रभु की देशनामें साधर्मिक भक्ति की भारी महिमा इसके जानने में आई। मगर, साधर्मिक भक्ति किस तरह करनी ? स्वयं दोनों रोज एक टंक खा सके इतनी कमाई हो रही थी। तब क्या करना ? साधर्मिक भक्ति करने के लिए क्या ज्यादा कमाई करें ? नही, धर्म करनेके लिए ज्यादा धन इकट्ठा नही होना चाहिए ऐसी मान्यता उनके हृदय में बस चूकी थी। ज्यादा धन कमाने गये तो जो रोज जितनी सामायिक हो रही थी इसमें कम करें वह तो इनको बिल्कुल पसंद नहीं था। तो फिर साधर्मिक भक्ति करनी कैसे ? इनकी महिमा (प्रभाव) भी कम तो है ही नहीं ।

पुणियाके मुख ऊपर चिंताकी रेखा उभर आयी। परंतु इनकी पत्नी वास्तविक धर्मपत्नी थी, सुशील थी। पतिव्रता और चतुर थी। इसने समाधान (रास्ता) निकाला। एक दिन आप उपवास करें एक दिन मैं उपवास करूँ। और उपवासके दिन एक समय का भोजन बचेगा, जिससे रोज एक साधर्मिक की भक्ति करेंगे ।

कमाल... वाह... कमाल... ! संजूके मुखसे सहसा निकल पड़ा ।

राजू बोला - संजू ! इसी तरह दोनों धर्मचुस्त पति-पत्नीने जीवनभर उपवास के पारणे एकाशन करके (सहज वर्षीतप सहित) साधर्मिक भक्ति की ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

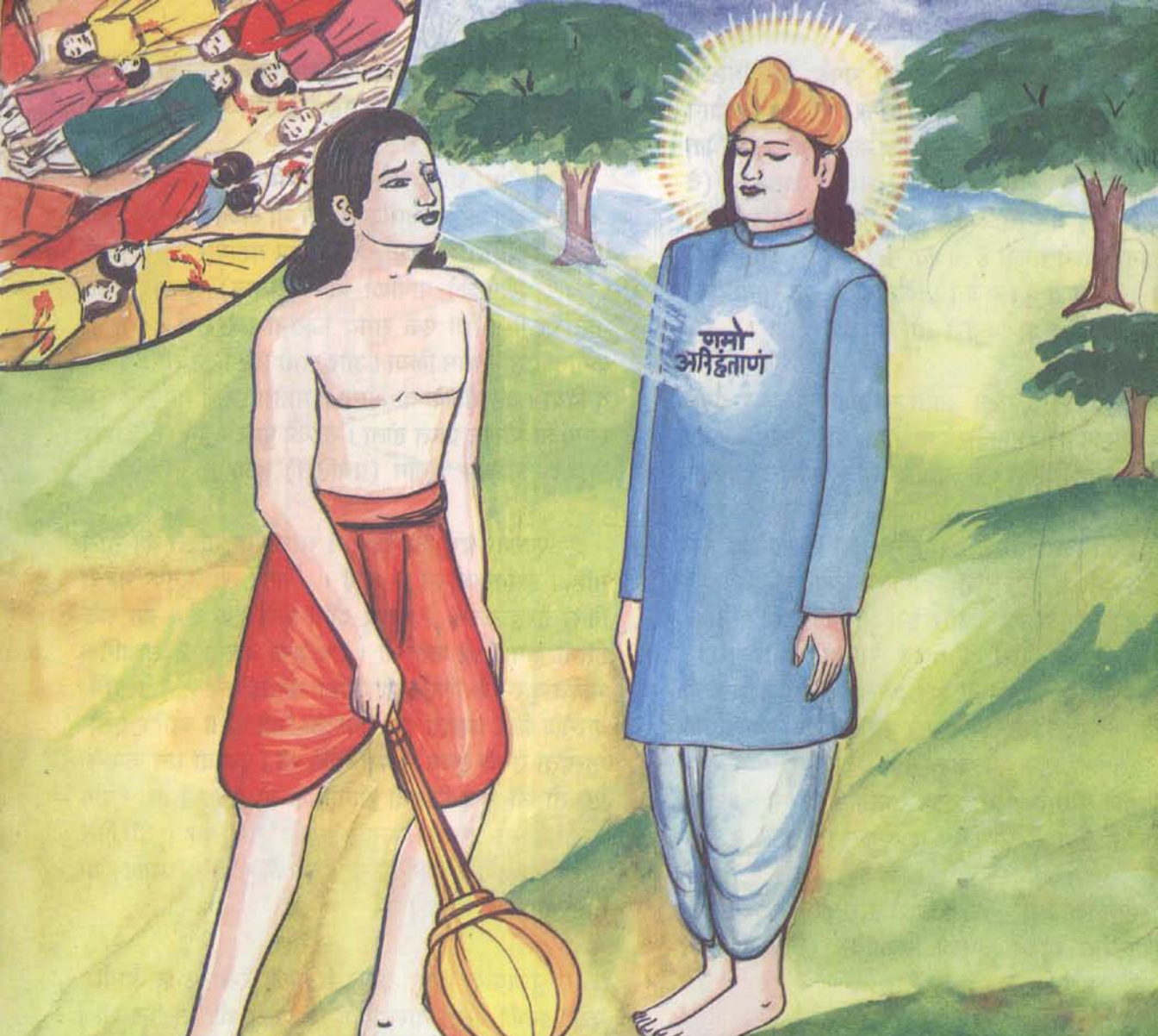

राजधानी में १२६० मानवों के
गिरे हुए मुर्दे.....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीसे चलते हुए दोनों मित्र नगरद्वारके पास आ गये। वहाँ पासमें ही विविध वृक्षोंसे भरी एक वाड़ी इनके देखनेमें आयी। इसके बिलकुल मध्यभागमें मुद्गर-यक्षका मंदिर था। मित्र-जोड़ी वाड़ीके आरामासन पर विश्राम हेतु बैठी। राजूने बात प्रारंभ की... संजू ! यह बगीचे का माली ''अर्जुन'' सदा पुष्प ग्रहण कर यक्षकी पूजा करता था। एक बार ऐसी बात बनी कि अर्जुन अपनी रुप-लावण्यसे युक्त पत्नी बंधुमति के साथ यक्षकी आराधना कर रहा था। इतनेमें कोई हलकी जातिके छह पुरुष वहाँ आये और अर्जुनमालीको रस्सीसे बांधा। फिर क्रमशः छह पुरुषने बंधुमति पर अर्जनुमालीके सामने ही अनाचार-सेवन किया। इससे ''अर्जुन'' अति क्रोधित हुआ। इसने यक्षको प्रार्थना करते हुए कहा कि इतने दिन तक तेरी आराधना-सेवाका यह फल ? जो सचमुच, तू मेरी आराधना से प्रसन्न है तो इस बंधन से तुरंत मुक्त कर। इतनी प्रार्थनाके साथ ही वहाँका अधिष्ठायक यक्ष जागृत हुआ। और इसने तुरंत ही अर्जुनमालीके शरीरमें प्रवेश किया। यक्षका प्रवेश होते ही अर्जुनमालीमें ऐसी शक्ति प्रगट हुई कि स्वयं ही सब बंधनो को क्षणमें ही तोड़ डाला। वह छह क्षुद्र पुरुष वहाँसे भागने में सफल हो इससे पहले ही अर्जुनने अपनी स्त्री-सहित सातोंकी हत्या की।

बस... फिर तो रोजकी सात हत्या (छह पुरुष + एक स्त्री की हत्या) का क्रम हो गया। अर्जुनमाली (के शरीरमें प्रविष्ट यक्ष) जब तक सातकी हत्या न हो, तब तक शांत चित्तसे बैठता नही। राजगृही की जनता ''त्राहिमाम्'' ''पुकार उठी...! आज सातकी हत्या हो गई है''... ऐसे समाचार जब तक ना मिले, तब तक घरके बाहर निकलने कोई तैयार ही नही होते। राजगृही के मार्गो में दिनमें भी श्मशानवत् शांति फैली रहती। रोते बालकको भी कहते कि ''माली'' आ रहा है... तो रोता बालक भी घबड़ाकर शांत हो जाता। ऐसा कुख्यात बने अर्जुनमालीने छह मास तक प्रतिदिन सात व्यक्ति की हत्या की। आखिर यह स्वर्णिम दिन भी आ गया। प्रभु महावीर राजगृहके बाहर उधानमें समवसरें...। सेठ सुदर्शन चुस्त श्रावक थे। जो भी हो जाय, पर प्रभु वीरकी देशनाका श्रवण कभी भी नही छोड़ते। मालीकी परवाह किये बिना यह देशना सुनने जा रहे थे...। इतनेमें ही सांडकी तरह क्रोधान्ध बने हुए और आकाश की ओर मुद्गर घुमाते हुए अर्जुनमाली सामनेसे दिखाई दिया। सेठ सुदर्शन तो वहाँ खड़े रहे...। जब तक यह उपसर्ग दूर न हो, तब तक चार आहारका प्रत्याख्यान करके श्री नवकार महामंत्र के ध्यानमें लीन हो गये। अर्जुन तो बिल्कुल करीब आ गया। परंतु यह क्या ? मारने के लिए उठाया मुद्गर शस्त्र हाथमें से नीचे गिर गया। वह सुदर्शन श्रावक के तेज-वर्तुलको सहन नहीं कर सका... मुद्गर यक्ष माली के देहसे छूटकर पलायन हो गया...और वह सुदर्शन सेठकी शरणमें जा पहुँचा...।

दोनों प्रभु वीरकी देशना सुनने गये। देशना सुनते ही अर्जुनमाली वैरागी बन गया। इतना ही नहीं... प्रभुके पास संयम स्वीकार किया और खूनी से मुनि बने। और इकट्ठे किये कुकर्मोको खपानेके लिए राजगृही नगरीके बाहर (अर्जुन मुनि) कायोत्सर्ग ध्यानमें निश्चल खड़े रहे। छह मास तक जिन्होंने मारनेका ही काम किया था... वह अब सामने जाकर मार खाने के लिए तैयार हो गये...। मरनेवाले के स्वजन-वर्ग अर्जुनमालीको धिक्कारने लगे... कोइ इन पर थूंकते है... कोई पत्थरों से मार रहे हैं... कोई लातोंसे मार रहे हैं... कोई लकड़ीसे प्रहार करते है... तो कोई अपशब्द सुना रहे हैं...। यह सब समभावसे सहन करते करते मुनिवर तो ''मैंने किए हुए मुझे ही भुगतना है'' ऐसी शुभ विचार-श्रेणीसे शुभध्यानमें चढ़ते श्रेणी प्रारंभ करते संपूर्ण घातीकर्मोंका क्षय करते करते केवलज्ञानकी प्राप्ति की... और मोक्ष भी गये।

संजू ! ''कम्मे शूरा धम्मे शूरा'' आखिर तो प्रभु महावीर के चरण-स्पर्श से अनेक बार पवित्र बनी हुई यह भूमि है। पापात्मामेंसे पुण्यात्मा ओर पुण्यात्मामेंसे परमात्मा बनाने की ताकत यह भूमिके रजकणमें है। (दोनों वहाँसे उठकर चलने लगे) संजू सोचने लगा, छह व्यक्तियों का काम और अर्जुनमाली का (अमर्यादित) क्रोध, यह काम-क्रोधकी जोड़ीने कैसी भयंकरता सर्जी ? राजधानीमें १२६० मनुष्योंके मुर्दे गिर पड़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रेणिक के सम्यक्त्व
स्थलपर मित्रयुगल...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुत ही समय पसार हो गया था। सूर्य भी जब अस्ताचल पर्वतकी ओर डूब रहा था। नई-नई घटनाएँ और घटनास्थलो में खोया हुआ मित्र- युगल तो आज अन्न-पानी भी भूल गये थे। श्रम भी ठीक ठीक लगा था।

नगर-द्वार पसार करनेके पश्चात् दूरसे ही एक रमणीय उद्यानके दर्शन हुए... महाराजाने खास तौरसे तैयार कराया हुआ यह उद्यान था। राज्यसभा का कार्य पूर्ण होते ही श्रेणिक, सवारी सह यहाँ क्रीडा करने आता था।

इस उद्यानमें अशोक, चंपक, आम्र आदि अनेक जातिके सुंदर हरियाले वृक्ष थे। जास्वंद, गुलाब, चमेली, मालती आदि अनेक सुगंधित पुष्पोंके मोहनीय छोटे छोटे छोड़ भी थे।

इस उद्यानके बराबर मध्यमें एक नाजुक व आकर्षक स्तूप था। इसी स्तूपमें कोई महात्मा की पादुका प्रतिष्ठित की हुई थी...। मित्र-युगल, इस पादुका के दर्शनार्थ जा पहुँचे। यह पादारविंद ''मुनि-अनाथी'' के थे।

राजा श्रेणिकको इस स्थल पर सबसे प्रथम समयक्त्व प्राप्त करानेवाले यही ''अनाथी'' मुनि थे।

जैनधर्मकी सत्य-रूपसे सच्ची-स्पर्शना करानेवाले अनाथीमुनिका राजा श्रेणिक पर महान उपकार था। दोनों मित्रोंने मुनि अनाथीके चरणारविंदोंको सविधि वंदन किया। आजका अंतिम, फिर भी जानने योग्य यह घटना-स्थल था।

राजुने बातको प्रारंभिकता दी...। संजू ! राजा श्रेणिकको इस वक्त जैनधर्मका कोई विशेष परिचय नहीं था। एक बार वह जब रसी उद्यानमें क्रीडा करने आये, तब यह उद्यानके एकांतमें एक चंपक-वृक्ष-तले एक ध्यानस्थ महात्माको कायोत्सर्ग मुद्रामें खडा देखा।

महात्माका यौवन-वय था। चेहरा भी राजवंशीय दिख रहा था। वह रूपमें अजोड थे। गुणमें बेजोड़ थे। त्यागी तपस्वी और तेजस्वी महात्माको वह साश्चर्य देखता ही रहा।

मुनिने कायोत्सर्ग पूर्ण किया। श्रेणिकने दो हाथ जोडकर प्रणाम किया। मुनिने धर्मलाभ दिया। श्रेणिक सहसा ही प्रश्न पूछ बैठे -

महात्मन् ! इस भरयौवनमें संसार त्याग ?

केशका लुंचन !

सुकोमल देहका शोषण !

पद्मिनीओंका परित्याग !

क्यों ?

आपकी देह-कांति कहती है कि आप कोई राजवंशीय लाडले हो... मगर, आप यह बताओ कि आपको कौनसे संसारने धोखा दिया कि आपको ये सुहाना संसार छोडकर इस कांटाले पंथकी ओर जाने की मजबूरी हुई ? आप अंतिम उम्र में भी मुनि का वेश धारण कर सकते थे। फिर भी तुरंत इस पथ पर जाने का कारण क्या ?

मुनि अनाथीने गंभीर और विरागमधुरी वाणीमें उत्तर दिया...

राजन् !

सुहाने लग रहे इस संसारमें तूने जो कल्पना की है, इसे भी अधिक बहुतसी भोग-सामग्री मुझे मिली थी...

इंद्राणी जैसी... गुणवंती... शीलवंती... मान-मर्यादावाली.. पत्नी...

लाखों करोडों सोनामहोर...

बांधवकी जोड़ी...

अनुकूल माता-पिता...

अपरंपार हाथी... घोड़े और रथ....

सबकुछ मिला था... क्या नहीं मिला था यही सवाल है।

श्रेणिकने कहा - फिर भी सभी का परित्याग ?

अनाथी बोले - हाँ, क्योंकि मैं अनाथ था।

मेरा कोई नाथ नहीं था।

श्रेणिकने कहा - बस इतनी ही बात ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनाथी बोले - हाँ राजन् !

श्रेणिकने कहा - लो, आजसे ही मैं आपका नाथ...।

अनाथी बोले - श्रेणिक ! जल्दी मत करो, तुम खुद ही अनाथ हो।

श्रेणिकने कहा - मुझे नहीं पहचाना ? मैं मगधका सम्राट...!

अनाथी बोले - फिर भी अनाथ...।

श्रेणिकने पूछा - कैसे ?

अनाथी बोले-सुनो...

एक दिन मेरी आँखोंमें वेदना उठी...

दिनमें तारे दिखा दे ऐसी...

कौशांबी नगरका मैं राजपुत्र, स्वर्गका पूरा सुख उतर आया, परंतु चक्षुकी भयंकर वेदनाने नरककी भ्रांति करा दी। सुहाना संसार भयंकर-विचित्र बन चुका। राजन् ! मांत्रिकों को बुलाया... तांत्रिकोंके द्वार भी खटखटाये।

पिताजी, धन्वंतरी वैद्योंको बुला लाये... परंतु... सबकुछ निष्फल... असफल...

पासमें खड़ी प्राणप्यारी पत्नी बोर आँसू बहाती रही। मा-बाप झुर रहे थे। पूरा कुटुंब शोक-सागरमें डूब चुका था..। समझमें कुछ आया राजन् !

सब कुछ होते हुए भी मैं अनाथ था... मेरी वेदना कोई ले सके ऐसी स्थिति नहीं थी। राजन् ! रोग, बुढ़ापा और मृत्यु... इन तीनों पर जय पाने वाला ही नाथ बन शकता है।

श्रेणिक ! है... ताकत...? जो ना, तो तू नाथ नहीं है। तुम खुद रोग-बुढापा... आखिर मृत्युको परवश है ही। इन तीनों के ऊपर जीत दिलानेवाले महावीर जैसे किसी नाथ की तुझे भी जरूर है ही। और मैंने संकल्प किया...

रोग जाय जो आजकी रात... तो संयम स्वीकारूं प्रभात।

कोइ शरण - आधार न बन सका। आखिर थककर मैंने महावीरको शरणरूपमें स्वीकारा। सचमुच रात बीती और वेदना चली गई। प्रभात होते ही महावीर को नाथ बना दिया। उनके बताये हुए मार्ग स्वीकार लिये।

श्रेणिक तो यह सुनते ही अवाक् हो गया। इसकी आ खुल गईं। आज तक बड़े गर्वसे अनाथ कहनेवाला माई का लाल इनको नहीं मिला था। उनकी चेत दिव्यताका संचार हुआ।

उसने महात्माके चरण पकड़ लिये। साढ़े तीन रोमराजीमेंसे संवेदना पसार होने लगी। ''मेरा वह सच इस प्रकारके मिथ्यात्वको छोडकर ''सच्चा वह मेरा''... प्रकारके सम्यक्दर्शनका (सत्य अर्थमें जैनधर्मका ब लाभ प्राप्त हुआ। सुदेव-सुगुरु-सुधर्मका वह पक्का भ बन गया।

शाम हो चुकी थी। अब घरकी और जानेके लिए ह (घोडागाडी) के सिवा और कोई चारा नहीं था। बाक बहुतसे घटनास्थल देखने बाकी थे।

टाँगेमें बैठे राजूने संजू को कहा... संजू...! जि खरेखर वास्ताविक अर्थमें स्वोपकार किया है वोही परोप कर सकते हैं। किसीसे भी न बुझने (रीझने) वाले मगधके सम्राट एक जैन महात्माके दर्शन मात्रसे पानी प हो गया। वह खुश हो गया। अनादिका मिथ्यात्वरूपी पलायन (छू) हो गया। निर्ग्रंथ पंचमहाव्रतधारी महात्म है यह ताकत...।

जंगलमें रहते हुए भी जगत पर सच्चा उपकार सं महंत ही कर सकते हैं।

प्रभु महावीरसे भी पहला (प्रथम) उप श्रेणिक पर अनाथी मुनिका हुआ। महावीरदेव बादमें मिले।

जय हो, प्रभु वीरकी... मुनि अनाथीकी.. और श्रेणिककी....

राजगृही की प्रथम द्वार-यात्रा पूर्ण हुई थी।

फिर कभी छुट्टीके दिनमें मिलेंगे।

ऐसा संकेत करके दोनों मित्र अपने घरकी ओ (वापस) फिरे...

तब अंधेरा भी छा गया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजधानी के
द्वितीय द्वारकी ओर .....

- ❋ महाशतक और सुलसा की हवेलीकी और .....
- ❋ गुरुद्रोही गोशालकके जन्मस्थल पर .....
- ❋ मित्रयुगल, नालंदाकी और .....
- ❋ मेरे मन एक ही है... नवकार .....
- ❋ उत्थान, पतन और पुनरुत्थानकी कहानी = नंदिनीवाव.....
- ❋ पुन्यभूमि : गुणशील उद्यान .....
- ❋ श्मशान बना स्मारक .....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाशतक और सुलसाकी हवेली पर....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगधकी राजधानी राजगृहीमें कौमुदी महोत्सव शुरु हो चुका था। नगरके बाहर नदी के किनारे पर मेलेका रंग भी ठाटसे जमा हुआ था।

राजा खुद ही जब इस मेले में भाग लेकर आनंद प्रमोद मना रहा हो... तब अन्य राजपरिवार और नगरकी जनताका तो कहना ही क्या ?

लगभग सुबहसे मेलेमें भीड़ रहती और शामको सब लौट आते... इस दरम्यान नगर में शून्यावकाश छाया हुआ रहता। नगरयात्रा के लिए यह मौके का फायदा उठाते पंद्रह दिनके बाद फिरसे मित्रयुगल नगरके राजमार्गकी ओर चल पड़े... इनके मन तत्वकी खोज यही मेले की मौज थी। मित्रयुगलकी द्वितीय द्वार (के ओर) की नगरयात्रा के साथ साथ सूर्य की अपनी रथयात्रा आकाश के मार्ग में आगे बढ़ती रही।

हवेली और महलों को पसार करते करते राजू एक महालयके पास आ पहुँचे। यहाँ एक महाश्रावक रहते थे। इनका नाम महाशतक था। सारी नगरीमें धर्मात्मा के रूपमें वे प्रसिद्ध थे। तेरह स्त्रियों के साथ उनका पाणिग्रहण हुआ था। इनके आठ तो गोकुल थे।

गोकुल याने क्या ? संजूने पूछा...

राजूने कहा : एक गोकुलमें दश हजार गायें रहती है, ऐसे ८ (आठ) गोकुल के मालिक महाशतक श्रावक थे। इतना होते हुए भी वह एकावतारी (बीच में एक भव करके तुरंत ही मोक्षमें जानेवाले) बन सके।

संजूने पूछा :- क्या (इतना) परिग्रह इनको डुबा न सका ?

राजूने कहा :- नहीं, क्योंकि इनको इन परिग्रह पर ममता नहीं थी। थी तो वो भी नहींवत् ...! जो ममतासे चिपक जाते है वही मरते (परेशान होते) हैं...

जो चिपकते नहीं वह बच जाते हैं।

संजू ! शायद एक साथ ही आठों गोकुलका अपहरण या नाश हो जाय, तो भी परिग्रह गँवाने के सामने महशतक को दुःख न हो, ऐसी मनःस्थिति इन्होंने प्रभु वीरकी देशना द्वारा तय्यार कि थी। इसीसे कह सकते है कि वह इस परिग्रह पर अत्यंत आसक्त नहीं थे।

प्रभु वीरके परम भक्त महाशतकके इतिहासको दोहराते दोनों वहाँसे आगे बढ़े।

सुलसा श्राविका का नाम तो संजूने भी सुना था।

यह श्राविका की हवेली अब करीब (नजदीक) आ रही थी। और बातोंमें डूबे मित्रयुगल कब सुलसाकी हवेली के पास पहुँच गये, इसका ख्याल भी न रहा।

अरे संजू ! किस प्रकार प्रशंसा की जाय सुलसा श्राविका की...?

त्रिलोकीनाथ प्रभु वीरने भी जिसको धर्मलाभका संदेश भेजा था।

वह संदेश सुनने के साथ ही उनके साढ़े तीन करोड रोम-रोम हर्षसे नाच उठे... !

जिसके सम्यक्त्व-गुणकी प्रशंसा स्वर्गलोक के स्वामी खुद इंद्र भी किया करता।

एक बार हरिणगमेषी देव द्वारा और दूसरी बार अंबड (परिव्राजकके वेशमें) श्रावक द्वारा की गई सम्यक्त्व की परीक्षा में जो अणिशुद्ध सफल बनी थी। और दोनों का सिर झूका दिया था।

अपने ''नाग'' नामक पतिके आग्रहसे महा-मेहनतसे प्राप्त किये दुए, देवअर्पित ३२ (बतीस) पुत्रों, जो श्रेणिक के वफादार अंगरक्षक बने थे। और युद्धमें एक साथ बतीस (३२)'कट के मर गये, ऐसा समाचार सुनकर भी जो स्वस्थ रह सकी थी... और बोल उठी थी.... 'ललाटमें लिखा हुआ ऋणानुबंध पूर्ण हुआ..., शोक करने से अब वह वापस मिलनेवाले नहीं.....!

जिनधर्म और प्रभुवीर प्रति अपार श्रद्धान्वित और इस भरतक्षेत्रमें आनेवाली (अगली) चोबिसीमें निर्मम नामके पंद्रहवे तिर्थंकर बनकर मोक्ष-पद पानेवाली सुलसा श्राविका को भावभरी वंदना अर्पण करते राजू और संजूने अगले घटनास्थल की ओर प्रयाण किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

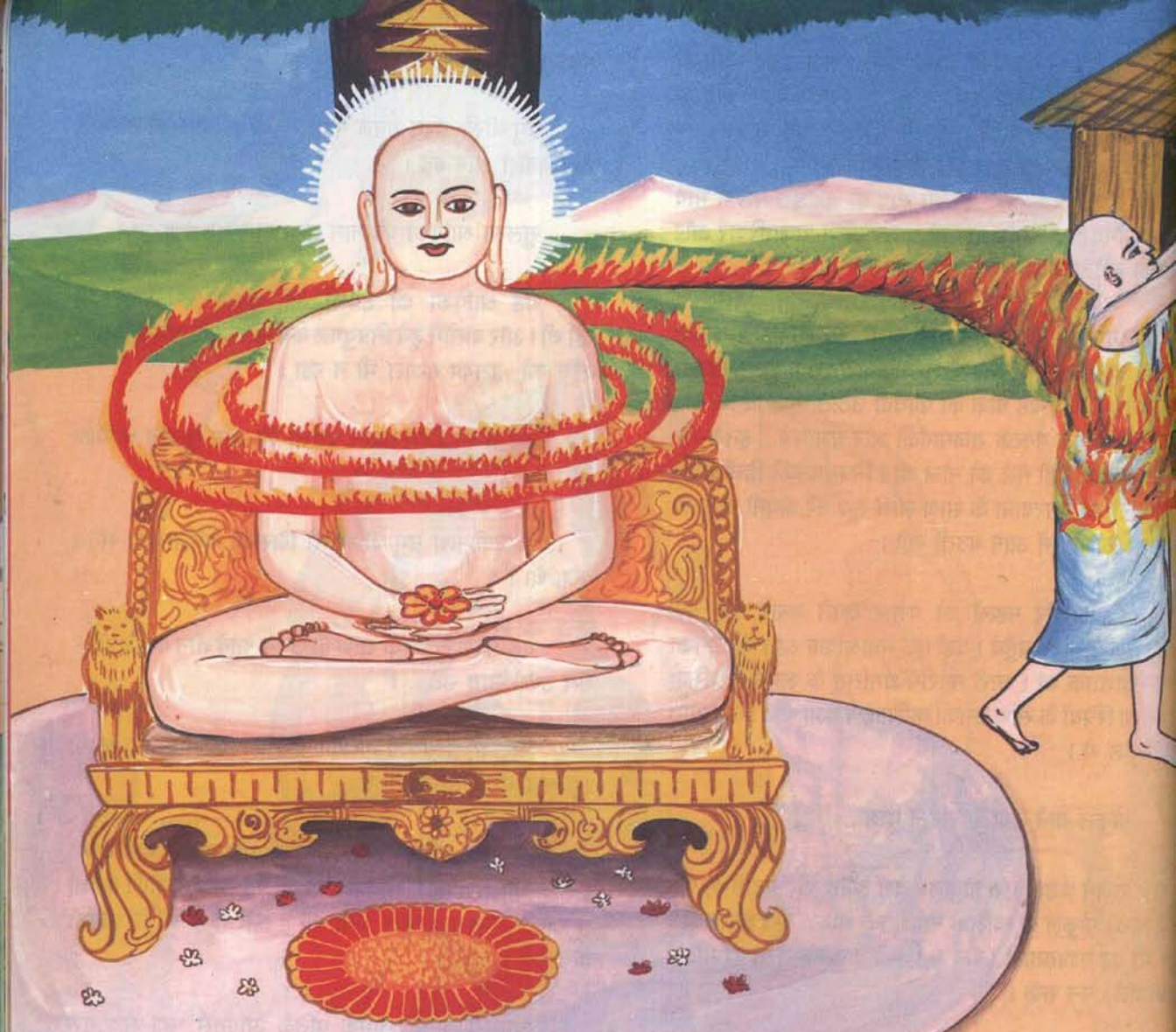

गुरुद्रोही – गोशालकके जन्म–स्थलपर.....

राजू, संजूको एक गलीमें ले गया...! जहाँ पुरानी गौशाला थी ! दोनों गौशालाके द्वारके पास आ पहुँचे। राजूने संजूको कहा मंखलीपुत्र गोशालेका यह जन्मस्थल है। बहुल नामके ब्राह्मण की यह गोशालामें जन्म होने से इनका नाम गोशाल रखा गया। एक बार प्रभु वीरको एक श्रेष्ठि सुंदर आहार वहोरा रहे थे यह देखकर गोशालेको हुआ.. इनका शिष्य बनने में मजा है... अच्छा खाना-पीना मिलेगा। इसने प्रभुको विनंती की। पर भगवंतने दीक्षा देनेकी अनुमति नहीं देनेसे आखिर गोशालाने स्वयं ही वेश धारण कर लिया। और खुदको प्रभु महावीरके शिष्यके रूपमें पहेचान देने लगा। अपने अनेकविध अपलक्षणोंसे प्रभुवीरको और स्वयंको भी जहाँ जाता वहाँ संकट खडा कर देता।

संजू...! गोशाला गुरुद्रोही इसीलिए कि प्रभुके पाससे उसने तेजोलेश्या छोड़ने की विद्या सीखी। और भविष्यमें प्रभुके ऊपर ही उसने तेजोलेश्या छोड़ी...। संजूने पूछा तेजोलेश्या याने क्या ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजूने कहा - जिसके ऊपर छोड दी जाय वह जलकर खत्म हो जाय ऐसी एक विद्या... लब्धि..... शक्ति.....!

संजूने पूछा - इसने प्रभु पर तेजोलेश्या क्यों छोड़ी ?

राजूने कहा - सुन, प्रभु केवली बनकर बिचरते - बिचरते श्रावस्ति नगरीमें पधारे थे तबकी यह बात है। अष्टांग निमित्त और तेजोलेश्याकी विद्यासे गर्विष्ठ बना गोशाला स्वयंको भगवानके (तीर्थंकर) रूपमें जाहिर करने लगा। तब नगरमें दो भगवंत पधारे हैं..... ऐसी चर्चा होने लगी। गौतमस्वामीजीने साश्चर्य भगवंतको सवाल किया कि यह दूसरे भगवंत कौन हैं ? तब प्रभुने कहा - वह दूसरा कोई नहीं, मेरा ही शिष्य बना मंखलीपुत्र - गोशाला है।

इस बातकी चर्चा गोशालाके कान पर आयी। वह तो आग-बबूला हो गया। क्रोधान्ध बनकर वह प्रभुके पास आया। प्रभुने सभीको सावधान कर दिया। सबको इधर-उधर हो जानेके लिए कह दिया। गोशालाने आकर प्रभुको गाली-गलौंच द्वारा जैसे-तैसे बोलने लगा। तू जुठा है... तू जिन नहीं.. मैं जिन हूँ...। वह गोशाला तो कबका मर चुका.... उस गोशालेके शरीरमें प्रविष्ट मैं जिन हुँ। इसीलिए तू तेरी जीभ बंद कर...।

भगवंत बोले...हे गोशालक ! तू ऐसे झूठ बोलकर अपनी जातको क्यूं बना रहा है ? तूं खुद जो गोशाला था, वो ही तू आज है। आगमें जैसे घी डाले... इसी तरह गोशालाने प्रभुकी और जिन्दी आग (तेजोलेश्या) छोड दी।

प्रभु के अतिशयसे वह आग प्रभु को तीन प्रदक्षिणा देकर गोशालेके शरीरमें प्रविष्ट हुई। प्रभुको तेजोलेश्याकी ज्वालासे ६ (छह) मास तक शौच में खून बहा जो आखिर रेवती श्राविकाने बहराये कोलापाकसे शांत हुआ।

संजू बोला - गोशालाका क्या हुआ ? राजूने कहा वही तो कह रहा हूँ... संजू ! गोशालेके शरीरमें प्रविष्ट आग सात दिन बाद गोशालेका करुण मृत्यु लेकर ही रही। संजू बोला - वह कौनसी नरकमें गया ?

राजू बोला - नहीं, वह बारवें देवलोकमें गया।

संजू बोला ! ओह.....! प्रभुका परम भक्त श्रेणिक नरकमें और गोशाला स्वर्गमें... यह किस घरका न्याय ?

संजू ! स्वयंने छोड़ी हुई आगसे ही गोशाला का शरीर जलने लगा और साथमें पश्चातापकी अग्निसे इसकी आत्मा भी जलने लगी। वह अपने इस महापापके लिए खूब पछताने लगा।

इसने अपने भक्तोंको कहा... भगवान मैं नहीं..... महावीर सच्चे भगवान हैं इनको मैंने तूं.....तां.....की भाषामें गालीगालौज की है। मेरे मृत्यु के बाद अब तुम मेरे शवको रस्सीसे बाँधकर मृत कुत्तेकी तरह पूरी नगरीमें धुमाना (घसीटना) और मेरे ऊपर थूंकना और पुकार करना कि.. यह गोशाला जिन नहीं है यह तो मंखलीपुत्र गोशाला ही है। प्रभु महावीरका.महाद्रोह करनेवाला है..... इस प्रकार उसने खुद स्वीकार किया है।

संजू ! इस तरह पश्चाताप करता हुआ गोशाला सातवें दिन मृत्यु पाकर बारहवें देवलोकमें गया.....।

संजू बोला - लेकिन इसने भगवानका द्रोह किया.. इनका क्या.. ?

राजूने कहा - इसका फल इसको जरूर मिलेगा। और अनंतकाल तक कु-योनिमें भटकता रहेगा। इसकी मौत (प्रायःकरके) हर दफे आगसे या शस्त्रोंसे ही होगी। अनंतकाल पश्चात् फिरसे जब वह मनुष्य बनकर केवलज्ञानी बनेंगे.. तब सबसे प्रथम देशनामें वह **''कदापि गुरुद्रोह करना नहीं**..... जिसके कारण मैंने अनंतकाल तक असह्य दुःख-वेदनाएँ सहन की हैं.....'' इस तरह श्रोताजनोंके सामने अपनी कहानी सुनायेंगे।

संजू ! शायद, देव-गुरू-धर्मकी या ज्ञान-दर्शन-चारित्रकी विशिष्ट आराधना न हो सके तो भी विराधना, आशातना, निंदा, तो स्वप्नमें भी नहीं करनी चाहिए। वरना यह चिकना (भारी) कर्म उदयमें आनेके साथ ही आँखमें से खूनके आँसू बहाते हुए भी छुटकारा पाना असंभव हो जायेगा।

गुरूहीलक-गोशालाकी कहानी सुनते - सुनते संजूकी आँखोमें तम्मर आने लगा। वह अपना मस्तक खुजलाने लगा। पापके पश्चातापसे गोशालाको स्वर्गकी भेंट... पापकी खुशीसे श्रेणिकको नरककी भेंट..... तीर्थंकरकी आशातनासे गोशालाका अनंत भवभ्रमण..... तीर्थंकरकी आराधनासे श्रेणिकको तीर्थंकर पद.....

वाह.. ! जिनशासनका न्यायासन कितना स्वच्छ.. न्यायी.....!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

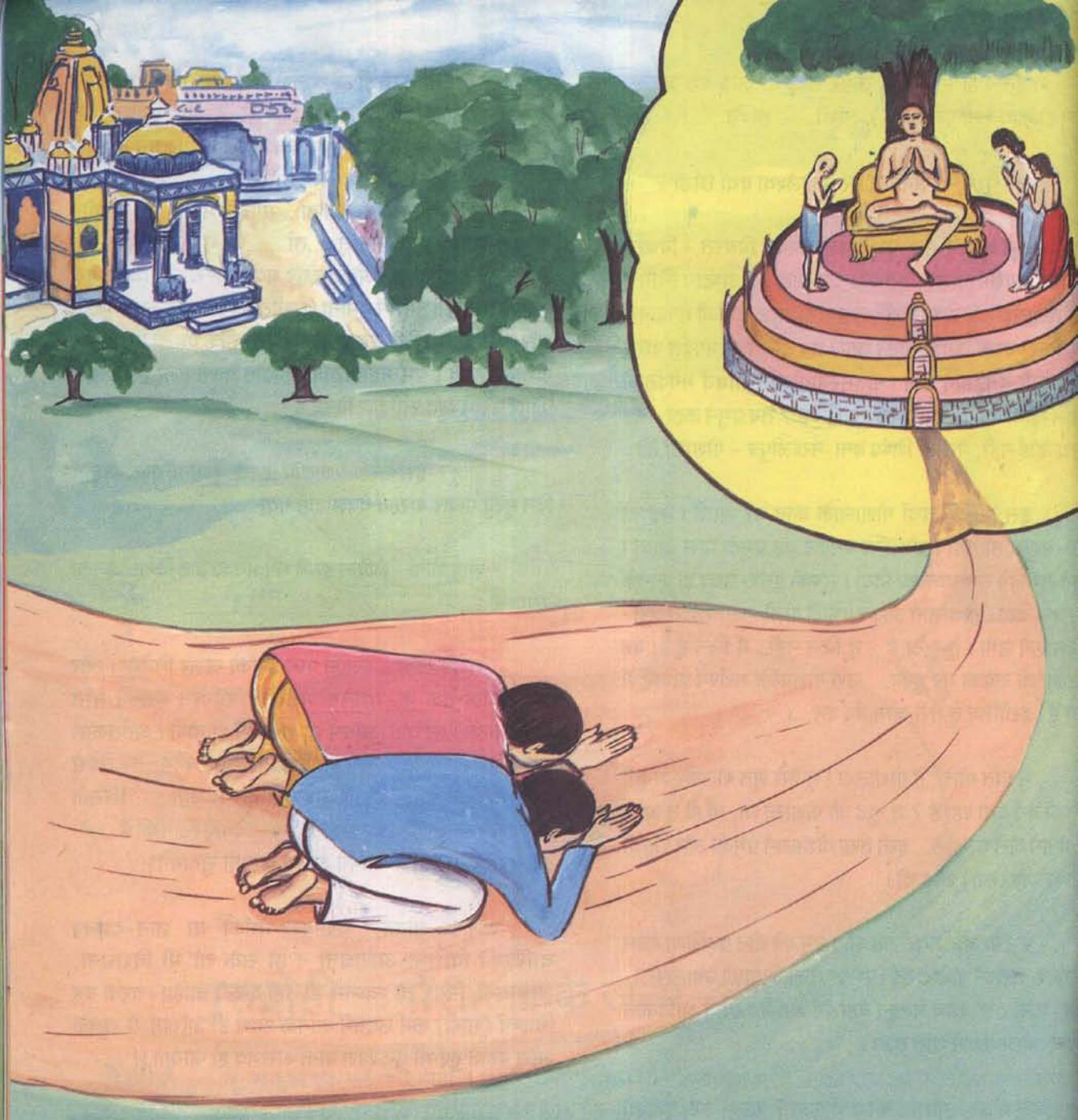

मित्रयुगल नालंदाकी ओर

गौ

शालाकी-गली नालंदा-गलीको स्पर्शती ही रही थी। गलीमें से बाहर निकलनेके साथ ही सुविशाल नाल
पाडामें राजू और संजूने कदम रखें। जैनोंका वह धाम था। राजुके देहमेंसे एक झनझनाट (हलचल) बा
आ गई। इसका हृदय सहसा भर आया। सूर्य मध्याह्ने तप रहा था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

W·10394

तो भी वह अत्यंत शीतलताका अनुभव कर रहा था। हर्षाश्रुसे भरी इसकी आँखें छलक रही थी।

राजू एक स्थानपर आते ही रूक गया। संजूको उद्देशकर वह बोला...

संजू! राजधानीके परम-पवित्र स्थलपर हम आ पहुँचे है।

प्रभुवीरके पादारविंदोसे परमपुनित बनी यह पुण्यभूमिकी हर रज (कण) नमस्करणीय बनी है।

करूणानिधान महावीर परमात्माके इसी स्थल पर १४ (चौदह) चातुर्मास हुए हैं।

संजू..! सैंकड़ोबार प्रभु महावीरके समवसरण की यहाँ रचना हुई होगी।

और समवसरणमें खुद देवेन्द्रों और नागेन्द्रोंने भी प्रभुको चामर ढोते सेवक बनकर पूजा की होगी।

देवांगनाएँ प्रभु आगे नृत्य करके अपनी भक्ति प्रदर्शित करती होंगी।

अशोकवृक्षकी शीतल छाया संतप्त-हृदयों को शांत-प्रशांत बनाती होगी।

मालकौंश रागमें मीठी-मधुरी प्रभुकी वाणीने अनेकोंके अज्ञान-अंधकार दूर किये होंगे।

संजू.. ! मगध-नरेश भी विनम्रभावसे अपनी शंकाओंको प्रगट करते होंगे.. प्रभु इनका समाधान करते होंगे..। इस सवाल-जवाबोंकी कैसी रमझट जमी होगी...।

मगध-नरेश श्री महावीरके पास मानरहित-मच्छर जैसा बन जाता होगा..। कैसा होगा यह अद्‌भुत-अकल्पनीय दृश्य...!

संजू बोला...

राजू! प्रभुने चौदह चातुर्मास ये एक ही महोल्ले में किये थे, इससे इतना ख्याल तो जरूर आता है कि प्रभुने यहाँ बहुत ही लाभ (धर्म बाबत का मुनाफा) दिखे होंगे।

हाँ संजू। यह राजगृह नगरके जंबू, शालिभद्र और धन्ना जैसे अनेक कोटयाधिपति अपनी दोम दोम साहिबी को छोड़कर भरे यौवन-वयमें प्रभुके शिष्य बने है। चारित्र अंगीकार करके स्व-पर उपकारों की झड़ियाँ (वर्षा) बरसाते आत्मकल्याणको सिद्ध किया है तो प्रभव और रोहिणेय जैसे नामी चोर भी प्रभु-शासनको पाकर सद्‌गति को प्राप्त हुए है।

संजू तो ऐसी धन्यतम नगरीमें अपना जन्म हुआ जानकर स्व को कृतकृत्य (सद्‌भागी) मानने लगा।

संजू! जब - जब प्रभु महावीर राजगृहीमें पधारते तब - तब राजा श्रेणिक बड़े आड़ंबर युक्त, नगरजन, राजपरिवार और अंत:पुर सह प्रभुका भव्य स्वागत करता था।

और एक बार तो राजा कोणिकने शानदार-अभूतपूर्व ऐसा जुलुस निकाला कि अभी भी जनता इस जुलुसको याद करती और प्रशंसाके पुष्प बिछाते नहीं थकती।

अरे संजू! राजधानीकी इस धर्मधराको स्पर्श करने हेतु सुरेन्द्रों और असुरेन्द्रोंको भी दौड़कर आना पड़ा है।

सैंकड़ो बार प्रभुने यह पुण्यभूमि पर पदार्पण करके राजधानीको चार चाँद लगाया है।

संजू और राजू दोनो अत्यंत भावविभोर-गद्‌गद बन गये। वो नालंदा-पाड़ेकी धरतीको अपने मस्तकसे घिसने लगे।

घुंटणोंसे गिरकर वह धरतीके कणकणमें से निकलते पवित्र परमाणुओंको झेलने लगे। और यह पवित्र रजकणोंसे ललाट पर तिलक किया।

यह पवित्र धर्मधराको पुन: पुन: प्रणाम करते दोनों वहाँसे आगे की नगरयात्राके लिए चल पड़े..।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेरे मन एक ही
है नवकार...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजधानीके अद्यतन महल और प्राचीन महालयों को देखते - देखते मार्ग और राजमार्ग पर से पसार हो रहे अलख के आराधकों की तात्त्विक विचारणा करते करते दोनो मित्र बहुत दुर निकल गये। फिर राजधानीके एक विरव्यात विश्रांति गृहके पास आकर बाहरके ओटले (विरामासन) पर विश्राम लेने बैठे।

थोड़ी देर मौन छा गया। राजूकी नजर सामनेकी एक चित्रशालाकी ओर गई। जिसमें कितने कला-स्थापत्य सुरक्षित थे। जो कि वह शाला पहलेसे कुछ जर्जरित बनी थी। राजूकी नजर के समक्ष एक बहुत पुराना इतिहास आ रहा था। मौन-भंग करते हुए राजूने संजूको कहा - सामने दिखाई देती चित्रशाला अमरकुमार और महामंत्रके संस्मरणोकी चाड़ी खा रही है।

संजूने पूछा - कौन अमरकुमार? नवकार और इसको क्या संबंध?

राजू बोला - यही तो बात करता हुँ, सुन........!!

यह राजधानीका मालिक (श्रेणिक) अभी मिथ्यात्वी था तबकी यह बात है।

किसी भी तरह यह चित्रशालाका बांधकाम नहीं हो रहा था। बांधकाम होता फिरभी टिकता नहीं था। दिनमें बने और रात्रिको टूटे.. ऐसी हालत थी। राजाने ब्राह्मण ज्योतिषीको पूछा - मुख्य जोषीने कहा...... बत्तीस लक्षणा बालककी बलि चढ़ाई जाय और इसका खून नींवमें ड़ालने में आये तो ही चित्रशाला बन पायेगी।

किन्तु, ऐसा बालक लाना कहाँसे? राजाने तो नगरमें ढ़िढ़ोरा पिटवाया और... जो बालक दे इसके वजन जितनी सुवर्णमुहर देनेका भी जाहिर कराया। मगर, खुदका बालक तो सबको पसंद होता है, कौन दे? आखिर, सात बच्चेवाले और गरीबीसे परेशान एक ब्राह्मण-ब्राह्मणीने अपने छोटे बालक अमरको दे देनेका तय किया। इसने राजपुरुष समक्ष बात रखी। राजपुरुष अमरको लेने आये।

छोटा सा यह बालक तो एकदम घबड़ा गया। जीव किसको प्यारा नहीं? बालक अमरने, माँ-बाप, भाई, बहन, फूफा-फूफी, मामा-मामी...... सभीके पास खूब आजीजी की.... बचाने की विनंति की... मगर कोइ भी संभालने के लिए तैयार नही हुआ। सभीने एक ही बात की...। खुद तेरे माँ-बाप ही तुझे बेचने तैयार हुए है, फिर हम क्या करें? आखिर आँखोमेंसे आँसु निकालते हुए अमरको उठाकर सेवकजन राजसभामें राजा श्रेणिक के पास ले आये।

अमरकुमारने राजा को विनंती की - राजन्! आप तो प्रजाके रक्षणहार कहलाते हो क्या मुझ जैसे निर्दोष बालककी आप बलि चढ़ाएँगे! क्या रक्षक ही भक्षक बनेगा?

परंतु राजाको तो 'चित्रशाला बनाने की' एक ही धुन थी। इसने भी दाद नहीं दी। ब्राह्मणोंने अमरको स्नान कराया, फूलहार पहनाया और टीकी-टपके किये...

और सभाके मध्यमे सुलग रहे अग्निकुंडमें अमरकुमार को उठाकर जैसे ही डाल रहे थे इतनेमें ही आग बुझ गई..., राजा सिंहासन परसे धरती पर गिर गया.... इनके मुँहसे खून बहने लगा। सभी ब्राह्मण भी मूर्छित होकर जमीन पर गिर गये।

संजू बोला - यह तो आश्चर्य........ गजब का चमत्कार.........!

राजूने कहा......हाँ...... नवकार मंत्रके प्रभावसे ही.....। बाल अमर एक बार, पहले जब जंगलमें लकड़ी लेने गया था तब उसको रास्तेमें एक जैन मुनि मिले थे। और अमरको नवकार मंत्र सिखाया था। वह नवकार मंत्र संकटके समय काम आया। अमरको लगा कि अब कोई बचानेवाला नहीं है... तब वह आंख बंद करके भावपूर्वक नवकार - मंत्रका रटण करने लगा...... और उसमें ऐसा एकाग्र बन गया कि खुदको भूल गया। सब दुःख बिसर गया। बस, फिर तो अदृश्यरूपमें शासनदेवने इसको सहायता की.... नवकारमंत्र इसका रक्षणहार बन गया।

अमरकुमारने दया लाकर नवकार मंत्रसे मंत्रित जल राजा और ब्राह्मणों के ऊपर छिड़का... छिड़कानेके साथ आलस मरोडते मरोडते सभी खड़े हुए। बिलकुल अच्छे हो गये। राजा और ब्राह्मणोने अमरकुमारके पाँवमें गिरकर (झुककर) क्षमा माँगी। अमरकुमार माफी देते देते बोला.. यह प्रभाव मेरा नहीं, नवकार महामंत्रका है।

राजाने कहा - अब यह राज्य तुझे देता हूँ। तूने हमें मृत्युसे बचाया है। अमरकुमारने कहा - नहीं, मेरा मन अब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

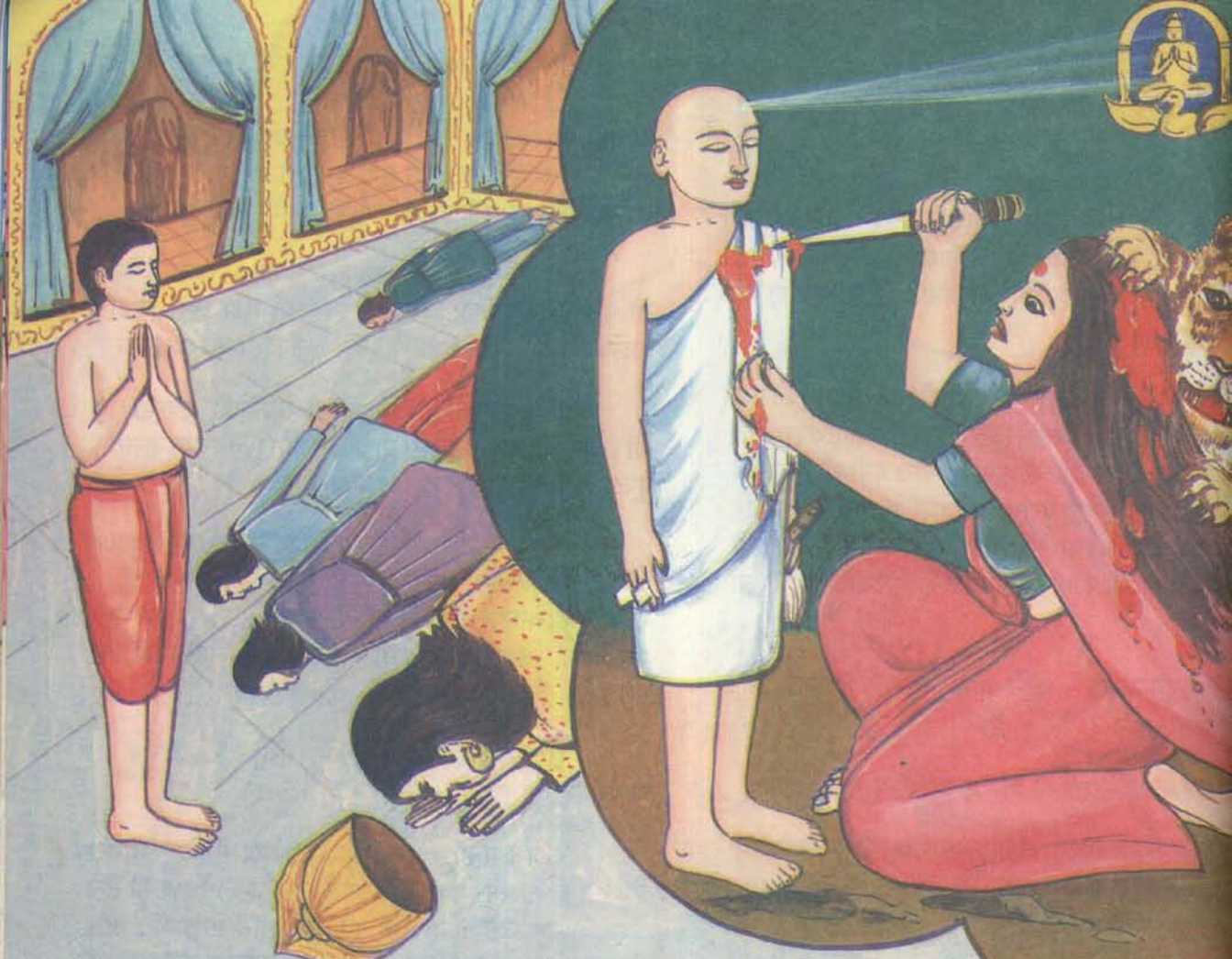

इस स्वार्थी संसारसे उठ गया है। मैं तो संयम ग्रहण करूंगा। और सचमुच अमरकुमारने संयम ग्रहण किया। और
रात्रिमें स्मशानके पास जाकर कायोत्सर्ग ध्यानमें खड़े रह गये। इस और अमरके माँ-बापको इस बातकी जानक
मिली। अमरकी माँ पूर्वभवकी वैरी थी। वह रातमें ही अमरकुमार (मुनि) के पास गई. और अमरमुनि को जानसे
डाला। अमरमुनि तो समाधिपूर्वक मृत्युका कष्ट सहन करते - करते स्वर्ग सिधारे। अमरमुनिको मारकर उसकी माँ
वापस आ रही थी कि तुरंत कोई बाघिन बीच रास्तेमें खड़ी थी। उसने अमरकी माँको अपना शिकार बना लिया
वह छट्ठी नरक मे गइ।

संजू! उग्र पाप या उग्र पुण्य तुरंत ही फलदायी होते हैं।

संजू तो नवकार मंत्रका प्रत्यक्ष प्रभाव और उग्र पापका प्रत्यक्ष कटु प्रभाव (फल) सुनता ही रहा। उसने उसी समय हर
१०८ नवकारमंत्र भावपूर्वक गिननेका निश्चय कर लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्थान पतन और पुनरुत्थानकी कहानी = नंदिनीवाव

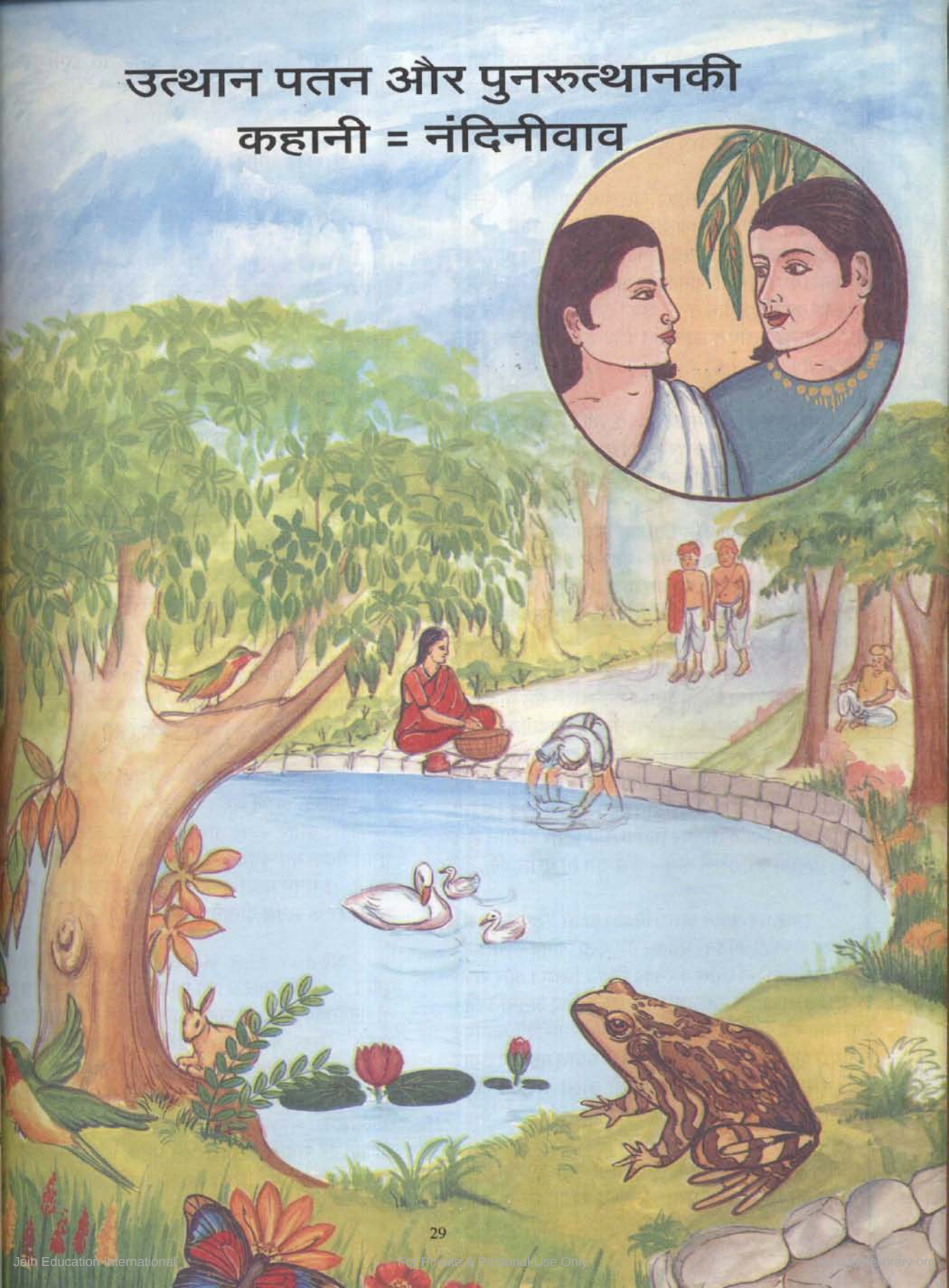

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्या होने में अब बहुत देर नहीं थी - दोनो मित्र नगरके (दुसरे) दरवाजेके पास आ गये थे। दरवाजे के बाहर एक मनोहर दृश्य उनकी नजरमें आया।

सुविशाल एक पानीका जलाशय था। नाम इसका नंदिनी, इस सरोवरमें राजहंस तीर रहे थे। छोटी - बड़ी मछलियाँ गुलाटें लेती आनंद-प्रमोद मना रही थी। कुछ झुके हुए कमल के पत्तों जैसे श्रमिकोंको आहवान दे रहे थे। सरोवर को स्पर्श करती हुइ वायु तन-मनको शीतलता प्रदान कर रही थी। जलपिपासु लोग तृषाको शांत करके हृदयमें ठंडक महसुस कर रहे थें।

ऐसा नयनरम्य मनोहर दृश्य देखकर संजू के हृदयमें ठंडक छा गई.... श्रम कुछ दूर हुआ। वह बोल उठा - किसने इस जलाशयका निर्माण किया ? राजू बोला..

संजू ! यह वावका निर्माता था **''नंदमणियार''**.... इसी नगरका रहनेवाला वह श्रीमंत-गृहस्थ था। आते-जाते साधुभगवंतोके सत्संगसे वह धर्म पाया। श्रावक भी बना। तब तक व्रतधारी बना कि हर पर्वतिथिके दिन वह उपवास-सह पौषध करता था।

एकदा इसने पर्वतिथिके दिन उपवास-सह पौषधव्रत किया। कौन जाने संजू ! उन समयमें मुनि भगवंतोंका विहार इस तरफ कम हो गया था। अर्थात् विहारका मार्ग बदल गया। उपाश्रयमें कोई भी मुनि भगवंत हाजिर नहीं। पौषधमें रहे नंद श्रावकको प्रतिक्रमण पश्चात् बहुत ही तृषा लगी। इतनी तृषा कि इसका जीव तालुपर चिपक गया। और दुर्ध्यान होने लगा। कितनी कोशिशसे जैसे - तैसे रात तो पसार की....

सुबह घर जाकर पारणा किया। बादमें ''तृषा (प्यास) का दुःख बहुत ही कठिन-भयंकर है'' ऐसा जानकर एक बडी वाव (जलाशय)-निर्माण करनेका निश्चय किया। और राजा के पास तुरंत जाकर जलाशय-निर्माणके लिए अनुमति ली। वाव बनानेके लिए सेंकड़ो मजदुर ब कारीगरोंको कामपर लगाया। बहुत आरंभ-समारंभ करने के पश्चात् यह वाव तैयार हुई। (वाव यानि चारों और सीडी वाला सरोवर जैसा जलाशय)

संजू ! नगरमें पीनेके लिए पानी होते हुऐ आरंभ - समारंभ का पाप करके ऐसा जलाशय खड़ा करना - वह अनुचित था। इतना ही नहीं.... आते-जाते सभी मुस यह वावकी प्रशंसा करने लगे। प्रशंसा सुनकर नंद तो बह खुश होने लगा।

(१) सत्संगका अभाव
(२) आरंभ-समारंभका दोष
(३) स्वयंने बनाई हुई वावकी खुशी और इसका अहंकार

इन्हीं कारणोंसे मृत्यु-समय नंदका जीव वाव जानेसे ''मेरी वाव'' करते - करते नंद मृत्यु बाद उसी मेंढक के रूपमें उत्पन्न हुआ। अब तो इसको कोई पहचा भी नहीं।

संजू ! **जहाँ जिसकी आसक्ति वहाँ उसकी उत्प**

स्त्रीमें अति आसक्त मनुष्य, मृत्यु पश्चात् स उदरमें कीडे के रूपसे उत्पन्न हो सकता है। धनमें आस मानव मरकर वनस्पति बनकर धन पर ही अपने मूल फै है। कंदमूल खानेमें आसक्त मनुष्य मरकर आलू कंदमूलमें ही उत्पन्न होता है। देवलोकके देव सरोवरका प (कानके कुंडलमें जड़ित) रत्नों आदिमें आसक्त ब अप्काय या पृथ्वीकायके रूपमें जन्म लेते है। और सद्गा गवाँ देते हैं।

मनुष्य जन्मको खो देनेवाला नंद भी आखिर ही जलाशयमें (आसक्त बनकर) मेंढक हुआ। किन्तु.... ह पूर्वकृत धर्म-आराधना निष्फल नहीं होती।

एकबार राजगृह नगरमें प्रभु महावीर पधारे... जि राजा श्रेणिक आदि वंदनार्थ जा रहे थे। सभीके मु ''महावीर पधारे - महावीर पधारे'' का ही रटण था सुनते मेंढक बने नंदके जीवको लगा - ऐसे शब्द मैंने सुने हैं... ! मनमें चहल-पहलसे पूर्वभवका ज्ञान हुआ। न भव नजर के समक्ष दीखने लगा।

अर..... र .....र जलाशय के आरंभ-समारंभस दुर्गति..... ? धिक्कार..... हो मुझको...! चलो, और कुछ तो भगवंतकी देशना तो सुनें। मेंढकराज तो चले प्रभुकी दे सुनने...। मगर, बेचारे की कैसी दशा ? सावधानीसे जा उछलकूद करते हुए जा रहा मेंढक श्रेणिक-राजाके घो पाँव तले कुचलकर मर गया। भगवंतकी देशना सुन उल्लासमें... मरकर वह मेंढ़कमें से देव बना। अरे... ! श्रेणिक की सवारी समवसरणमें पहुँचे, इसके पहले ही बना हुआ नंद, प्रभु वीरकी सेवामें उपस्थित हो गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

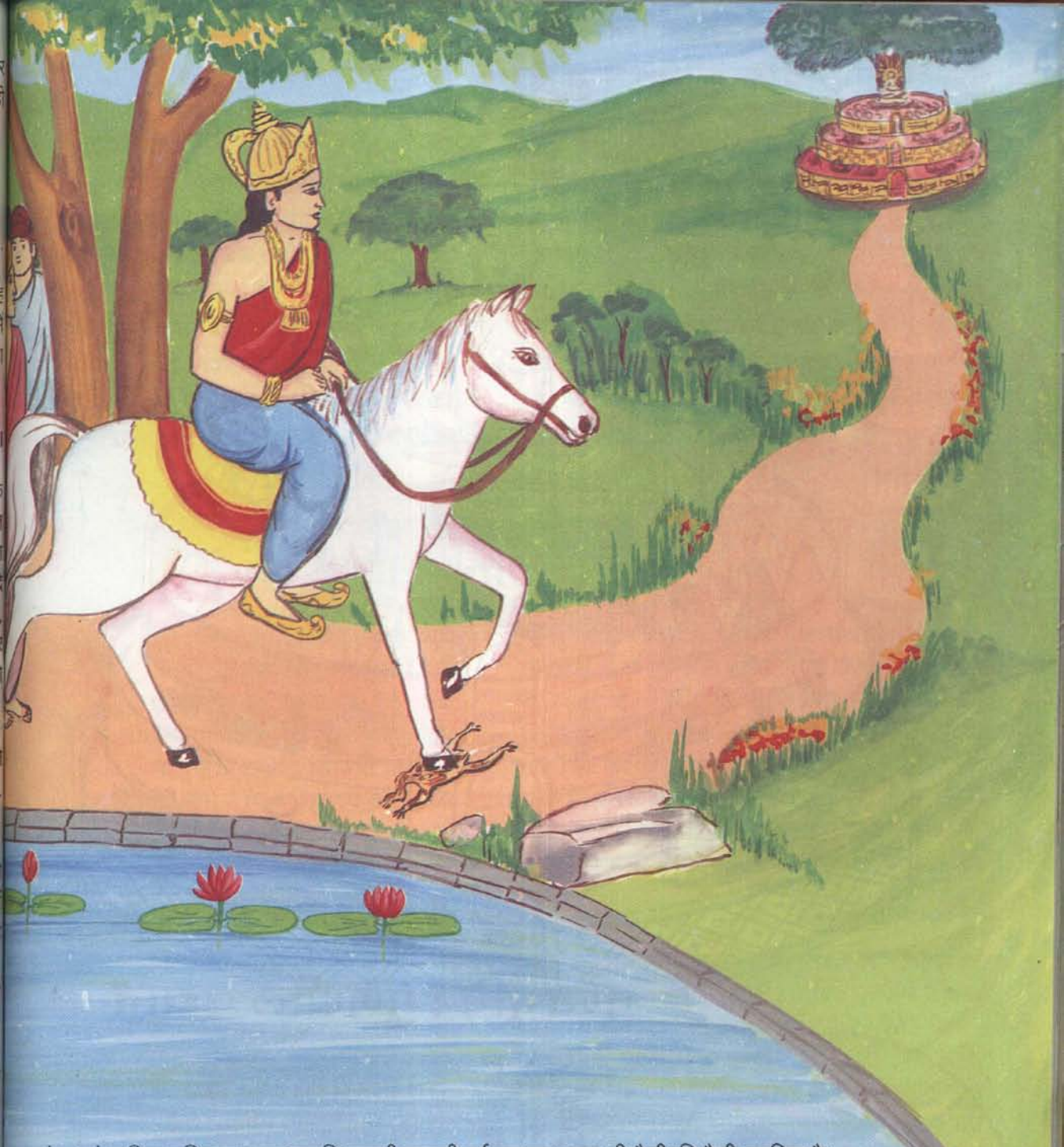

संजू ! नंदमणियारकी पतन-उत्थानकी कहानी सुनाती हुई यह वाव आज भी वैसी की वैसी सुरक्षित है।

सत्संगके प्रभावसे-श्रावक धर्म मीलना...

सत्संग छूट जानेके कारण - उल्टेमार्ग चले जाना... धर्मसे छूट जाना... किन्तु की हुई आराधना निष्फल न जाना... राजधानीके बाहर प्रभुजी का गुणशील उद्यानमें समवसरना (पधारना)...., मेंढकका वंदनार्थ जाना..... इसका मृत्यु और आखिर देव बनना... यह सब.....

ain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्यभूमि : गुणशील उद्यान

संजू बीचमें ही बोल उठा - यह गुणशील उद्यान कौनसा जहाँ प्रभु महावीर समवसरे थे ?

राजू बोला : देखो....., वो जो सामने दीख रहा है वही और दोनों मित्र अस्ताचलकी ओर ढलते हुए सूर्यके साथ अति वेगसे वह उद्यानमें पहुँचे। महावीर प्रभु जहाँ सह-परिवार सैंकड़ो बार पधारे और अनेकबार समवसरण रचना हुई.....। गौतमादि गणधरभगवंतों और चौदह हजार अणगार और छत्तीसहज़ श्रमणीओंके पादारविंदसे पवित्र बने इस उद्यानकी सुविशालता देखते ही दोनों मि चकाचौंध हो गये। वहाँ एक अशोक वृक्षके नीचे पालखी लगाकर बै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोनों हाथ ढींचण पर स्थिर किये और आँखें बंद करके निश्चल होकर समवसरण घ्यानमें डुबकी लगाने का प्रयत्न किया। रजत, स्वर्ण और रत्नोंके तीन गढ, (इनकी) ऊपर मणियोंसे युक्त सिंहासन पर प्रभु विराजमान है। बारह पर्षदा विराजित (बैठी) है। प्रभुके देहसे १२ (बार) गुणा ऊंचा अशोकवृक्ष, जो सभीको शीतलता प्रदान कर रहा है। दोनों बाजु इन्द्रों चामर ढो रहे हैं। पैंतीस (३५) अतिशययुक्त (मालकोश रागमें) देशना सुनने के बाद देवांगनाएँ और इन्द्राणियाँ प्रभु के सामने नृत्य कर रही है। पचास हजार केवलीशिष्यों के गुरु गौतमस्वामी, प्रभु महावीरके सन्मुख बाल बनकर उत्कटासनमें नत-मस्तक बैठे हैं। मगधपति श्रेणिक सेवकवत् हाथ जोड़कर प्रभुकी स्तुति करते हुए नजर आ रहा है। दोनों मित्र उसी समयके - समवसरण ध्यानमें खो गये.... वे गद्‌गद बन गये। प्रभु वीरकी यादमें इनकी आँखें चौधार बरस रही... तीर्थ से भी ज्यादा वहाँके वातावरणसे इनके अंग-अंग अति आनंदके स्पंदन युक्त हो गये। अनंती कर्मरज आत्मा परसे गिर रही हो, ऐसा इन दोनों को अनुभव हुआ। और इनके अंतरमेंसे वीर..... वीरकी सहज ध्वनियाँ उठने लगीं। इस धरणीकी पवित्र रज इन्होंने मस्तक पर चढ़ाई। जब तक वह धरणी दिखाई दी... तब तक अनिमेषदृष्टि से (वह धरती के) दर्शन करते ही रहे। गणधर श्री सुधर्मा-स्वामी की यह निर्वाण भूमिको देखते ही रहे.....।

श्मशान बना स्मारक...

लौटते वक्त फिर वही नंदिनी वाव आयी। संजूकी नजर उस वावकी बांयीं तरफ गई. २५ कदम दुर एक ऊंचा स्मारक दिखाई दिया। उस स्मारकमें एक महात्माकी प्रतिमा दिखाई दी। इनके दो हाथ (आकाशकी और) ऊँचे थे। एक पाँव पर वे खड़े थे और इनकी दृष्टि कुछ ऊंचाईपर सूर्य सन्मुख ध्यानस्थ अवस्थामें स्थिर थी।

संजूको आश्चर्य हुआ - इसने राजूको पूछा - यह स्मारक किसका है ?

राजूने कहा - संजू, प्रसन्नचंद्र राजर्षि ने इसी स्थान पर इसी अवस्थामें केवलज्ञान प्राप्त किया था..। जरा थोड़ी दूर नजर कर... वो श्मशानमें खंडहर दीख रहा है न ? बस, यह श्मशानभूमि ही राजर्षिकी कैवल्यभूमि है। संजू ! किस प्रकारसे प्रशंसा की जाय इस राजधानीकी.... जिसकी श्मशानभूमि भी महात्माओकी कैवल्यभूमि बनी है। यह प्रसन्नचंद्र पोतनपुर नगरके राजा थे। मनोहर व मोहहर ऐसी प्रभु वीरकी वाणी सुनकर वे वैरागी हुए। अपने बाल राजकुमारको राजगदी पर स्थापित करके राज्यका भार मंत्रीयोंको सोंपकर दीक्षा ली। एकबार विहार करते - करते वे इस श्मशानभूमि के पास पाँवके ऊपर पाँच चढ़ाकर... दोनों हाथ ऊपर करके.... सूर्यके सामने दृष्टि लगाकर कायोत्सर्ग ध्यानमें खड़े थे.... इतनेमें ही यहाँसे राजा श्रेणिक की सवारी निकली... राजा (गुणशील) उद्यानमें प्रभु वीरकी देशना सुनने हेतु जा रहे थे..... इनके एक सैनिक ने दूसरे सैनिकको निंदा करते हुए कहा कि - बेचारे छोटे कुंवरको गद्दी पर बिठा दिया अब इनके राज्यको अपने हाथ करनेके लिए मंत्रीओंने कमर कसी है। प्रसन्नचंद्रने इस बालकको राज्य सौंपकर बिना सोचा काम (गलती) किया है। बालकको और पूरे राज्यको संकटमें डाल दिया है। इन्होंने धर्मकी जगह पर अधर्मका आचरण किया है।

इस प्रकारके वचनको ध्यानस्थ मुनि प्रसन्नचंद्रने सुनकर सोचा कि... अहो ! जो मैं इस वक्त राज्यको सँभाल रहा होता तो मंत्रिओं को कड़ी शिक्षा दे देता। ऐसे संकल्प-विकल्पोंके चक्करमें अप्रसन्न मनवाले प्रसन्नचंद्रमुनि, मुनिपनेको भूलकर मनसे ही वह शत्रु बने हुए मंत्रीओंके साथ युद्ध करने लग गये। इसी समय राजा श्रेणिक वीर-प्रभुके पास पहुँचे। और प्रभुको वंदना करके सवाल किया - प्रभु ! अभी रास्तेमें मैंने ध्यानस्थ अवस्थामें (रहे) प्रसन्नचंद्र राजर्षिको वंदन किया है। अगर इस स्थितिमें वो मृत्यु पाएँ तो कौनसी गतिमें जायेंगे ? प्रभु बोले - सातवीं नरकमें ! श्रेणिक सोचमें पड गये.... थोड़ी देर बाद पक्का करने के लिए फिरसे पूछा - भगवन् ! प्रसन्नचंद्रमुनि जो अभी इस समयमें काल करें तो कहाँ जाएँगे ? भगवंतने कहा कि सर्वार्थसिद्धि विमानमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

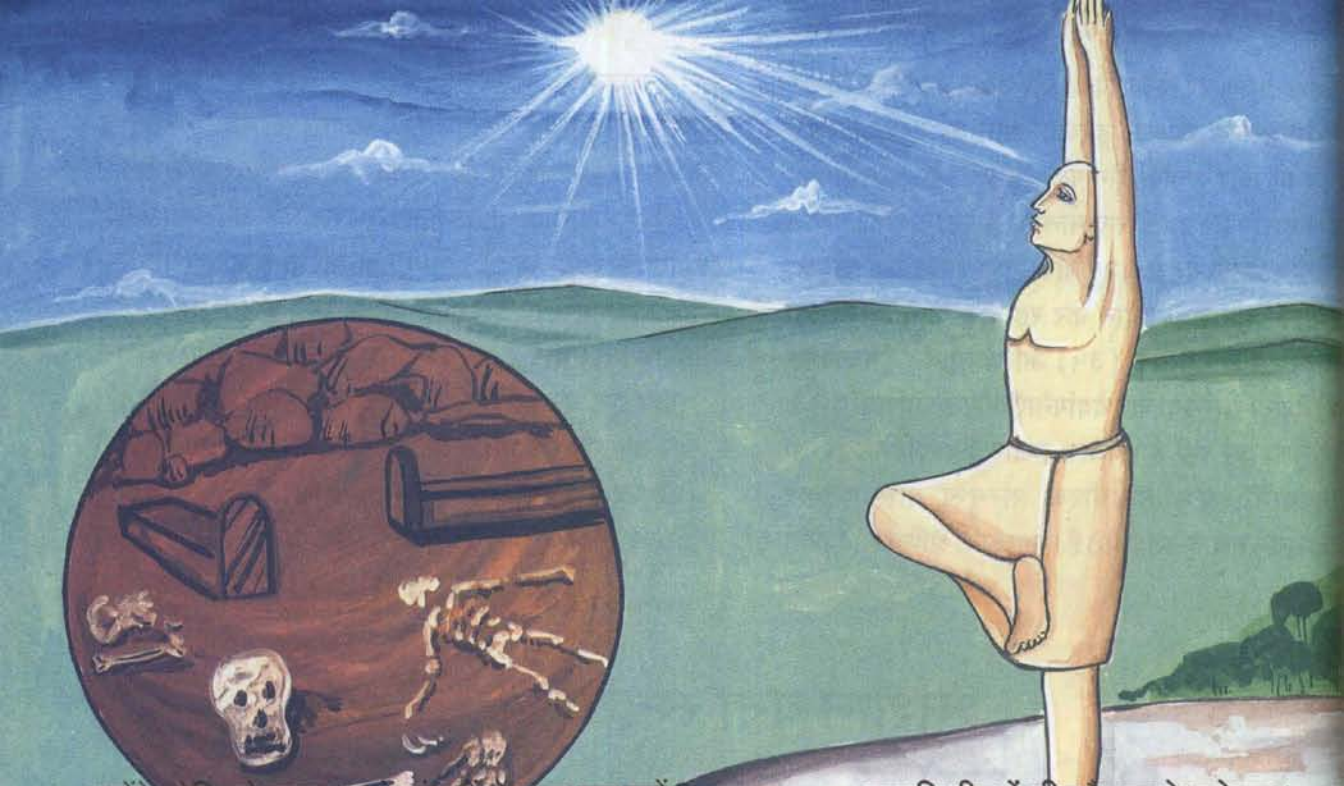

जायेंगे। श्रेणिकने कहा - क्षणके अंतरमें दो अलग बात क्यों ? भगवंतने कहा कि तूने जब मुनि को वंदन किया तब वो मनहीमन शत्रुओंके साथ युद्ध कर रहे थे.... और श्रेणिक। तुम यहाँ आये तब तक तो वो ऐसे विचारोंमें चढ़ गये कि युद्धमें मेरे सभी शस्त्र खत्म हो गये हैं। इसीलिए अत्यंत क्रोधांध होकर **''मार डालूं... सालेको''**..... ऐसी दुष्ट विचारणासे मस्तक परसे मुकुटका घात करने जा रहे हैं... परंतु जैसे मस्तक पर हाथ पहुँचा तब मस्तक तो मुंडित था... तुरंत ही मुनि-अवस्थाका रव्याल आया। स्व-निंदा करने लगे... भारी पश्चाताप किया.. फिरसे प्रशस्त (शुभ) ध्यानमें स्थिर हुए.. इससे तेरे दूसरे प्रश्नके समय वह सर्वार्थसिद्ध देवलोक के योग्य हो गये। श्रेणिक और भगवंतकी यह बात चल रही है तब वहाँ ध्यानस्थ प्रसन्नचंद्र महात्माके समीपमें देवदुंदुभि बजी... श्रेणिकने फिरसे प्रश्न किया - प्रभुने फरमाया - प्रसन्नचंद्रराजर्षि ने क्षपक श्रेणीमें चढ़ते अंतिम क्षणोंमें केवलज्ञान पाया है। देवतादि मंगलनाद द्वारा इनकी महिमा मना रहे हैं। वाह..! वाह...! कैसी मनकी गति है... संजूके मुखसे सहसा निकल पड़ा....

हाँ संजू ! राजू बोला - मनकी गति न्यारी है। मन माळवेकी ओर ले जाय....मन मुक्तिमें भी ले जाए। मन महाविदेहक्षेत्रमें ले जाये और मन माघवती (७वीं नरक) में भी ले जाये। पवनसे भी मनकी गति तीव्र होती है। बड़े - बड़े योगिओंको भी मनको वशमें करना मुश्किल बन जाता है। इसलिए ही कहा है कि-

मन की जीत में जीत है, मन के हारे हार।
मन ले जाये मोक्षमें रे, मन ही नरक मोझार।

संजूने पूछा - ऋषिमुनि श्मशानको साधना स्थलके रू क्यों पसंद करते होंगे ? राजू बोला : क्योंकि साधना के लि इनको नीरव एकांत स्थल ज्यादा अनुकूल बनता है। ऐस स्थल या तो श्मशान होता है और या तो जंगल होता है श्मशानमें तो व्यंतर आदिसे उपसर्ग होने का संभव भी रह है... महामुनि तो वह उपसर्गोको भी कर्मनिर्जरामें मह उपकारक मानते है। इसीलिए वह ऐसे स्थल विशेष पस करते हैं। संजू ! इसमें महान सत्व होना भी जरुरी है। निर्ब मनवालेका तो काम हीं नहीं। यह स्मशान जैसे नमस्क महामंत्र आराधक बाल अमर (कुमार) मुनिका अंति समाधिस्थल बना, वैसे राजर्षि प्रसन्नचंद्रका स्मारक बना... कैसी सुंदर सुशोभित लग रही है... काचँके कक सुरक्षित... संगमरमरमें आकर्षक खुदाइ कामवा प्रसन्नचंदजीकी.... पाँव के ऊपर पाँव स्थापित ध्यानस्थ मूर्ति....। राजा श्रेणिकने ही यह स्मारक तैयार करवाया ऐसा लगाता है....।

अंधेरा हो चुका था। दोनों मित्रोंने घरकी ओर जाने लिए टांगागाडी पकड़ी।

प्रभातमें (पुनः) शेष नगर-यात्राकी शर्तके साथ दो मित्र घर पहुँचे तब द्वितीय द्वारकी सफल यात्राका पूर्ण संतो इनके मुख पर तैर रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजधानीके
तृतीय द्वारकी ओर ...

* मगध–प्रसिद्ध मंदिरमें...
* विश्वकी अजायबी : जंबू महल...
* मक्खीचूस (लोभी) मम्मण..... (नदी–तट पर मित्र–बेलड़ी)
* सुनार बना खूनी..... खूनी बना मुनि....
* आजकी ताजा खबर .....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगध-प्रसिद्ध मंदिरमें.....

ज दूसरे दिन भी कौमुदी महोत्सव यथावत् चालू था। नगरके बाहर मेलेमें धीमी-सी जनताकी हलचल शुरु हुई थी। प्रात:कार्य पूर्ण करके सुबहमें ही संजू राजूके वहाँ पहुँच गया। आज नगरके तृतीय महाद्वारकी ओर जाना था। और वहाँ द्वारके पास से बारह मास बहती नदीके किनारे तक पहुँचना था। मेला भी वही किनारे पर लगा हुआ था।

इस दिशाके राजमार्ग पर नजदीक ही एक जिनमंदिर था। जो पूरे मगधमें प्रसिद्ध था। राजा श्रेणिकने भारीरूपमें संपत्ति खर्च करके इसकी मरम्मत भी कराई थी। इस जिनमंदिरके अंदर बीसवें तीर्थकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी भगवंतकी प्राचीन और भव्य मूर्ति थी। मित्रबेलडी सबसे प्रथम इस जिनालयके दर्शनार्थ पहुँची ! इस सुविशाल जिनालय और मनोहर जिन बिंबके दर्शनसे इनके दिलमें भारी प्रसन्नता छा गई। दोनोंने भावविभोर बनकर चैत्यवंदन किया।

आवस्सही बोलकर जिनालयसे बाहर निकले। बा संजूको उद्देश्यकर राजू बोला... संजू ! वर्तमान चोबीसी बीसवें तीर्थकर श्री मुनिसुव्रतस्वामीके निर्वाण (कल्याण भूमि सिवा च्यवन, जन्म, दीक्षा और कैवल्य.... यह चा चार कल्याणक इसी राजगृह नगरमें हुए हैं....। अपनी राजध मात्र महावीरदेवकी विहारभूमि ही नहीं परंतु कल्याणक भू भी है..... । और मुनीसुव्रतस्वामीके समयमें हुए श्री सि चक्रजीके महान आराधक श्रीपाल और मयणासुंदरी रसभरी कथा गौतमस्वामी महाराजने श्रेणिक आदि स समक्ष इसी नगरीमें ही कही थी न ?

इस प्रकार नयी-पुरानी बातें करते करते मेलेकी ओ जा रही जनसमूहकी भीडके साथ साथ राजू और संजू आ बढे। जाते जाते वे एक जगहपर आ पहुँचे..... जो मात्र मगध ही नहीं, पूरे विश्वकी अजायबी कहने योग्य थी।

विश्वकी अजायबी : जंबू महल.....

लेके कारण इस महलके अंदर आज खास भीड नहीं थी..... जोकि यह महल आज तो राजाकी सत्तामें था। इसके ऊपर चौकीदारका पहरा था। चौकीदार ? संजू बोल उठा..... ।

राजूने कहा : हाँ... चौकीदारका पहरा !

संजू बोला : ऐसा क्या है इस महलमें ? चल..... हम अंदर चलेंगे। दोनों मित्र अंदर प्रविष्ट हुए। सर्वत्र मणिरलोंका प्रकाश फैला दुआ था। इस महलकी छत पर स्वर्ण-पत्र ज हुआ था.....। दीवार मूल्यवान मणियोंसे अंकित थी.... इस पूरा भूमितल चाँदीके स्तंभोंसे जडित था। मित्रयुगल महल दुसरे खंडमें जा पहुँवा। जो खंड जंबूकुमारके जीवनचरित्र आलेखित किये हुए अनेक सुंदर चित्रपटोंसे सुशोभित था स्वर्ण-पट्टियोंसे जडित इस चित्रपटको दिवारके उपरके भा लगा दिया था।

सेवामें नियुक्त (किये) एक राजसेवकने एक-ए चित्रपटका सुंदर शब्दोमें दर्शन करवाया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रपट १

चित्रपट २

चित्रपट ३

चित्रपट ४

चित्रपट ५

चित्रपट ६

चित्रपट – १. : ऋषभदत पिता और धारिणी माताकी कुक्षिसे जन्मा पुण्यवंत वह बालक का जंबूवृक्षके स्वप्नसे सूचित जंबू ऐसा नाम स्थापित किया गया।

चित्रपट – २. : कला, वय और गुणसे वृद्धि पानेवाले जंबूने यौवन में कदम रखे। एकबार राजगृही नगरीमें श्री सुधर्मास्वामी पधारे.... १६ सालका जंबू देशना सुनने गया। एक ही देशनासे जंबूका मन संसारसे विरक्त हुआ.... उसने सुधर्मास्वामीको प्रार्थना करते हुए कहा कि ''प्रभो ! जब तक मैं चारित्रके लिए माता-पितासे, अनुज्ञा लेकर न आऊँ तब आप यहाँ पर ही स्थिरता कीजियेगा'' - गणधर भगवंतने कहा - वत्स, अच्छे काममें ढील नहीं करना।

चित्रपट – ३. : माता-पिताकी अनुमतिके लिए जंबू जैसेही नगरद्वारमें प्रवेश करते हैं..... न जाने यकायक लोहेका गोला इसके कानके पाससे पसार हुआ। जंबू सोचता है.... अहो ! मरते-मरते बचा..... आयुष्यका भरोसा नहीं... तुरंत वहाँसे वापस लौटकर सुधर्मास्वामीके पास आकर (ब्रह्मचर्य) चतुर्थव्रत अंगीकार करते है। संसारको सीमित बना देते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रपट ४. : घर आकर माता-पिता के समक्ष चारित्रकी अनुमति मांगते है। मोहवश माता-पिता कहते हैं : वत्स ! पहले पुत्रवधूओंका मुँह हमें दिखाओ फिर जो करना हो वह करो। जंबूने कहा - मंजूर है ! परंतु जिस दिन शादी का वरधोडा निकलेगा, इसके ठीक दूसरेही दिन मेरी दीक्षाका भी वरधोडा निकलेगा। माता-पिताने यह बात स्वीकार कर ली।

चित्रपट - ५. : अप्सरा के समान आठ-आठ अत्यंत रूपवती कन्याओंके संग जंबूकी सगाई हुई थी। उन कन्याओंके माता-पिताको यह बात (हकीकत) बतलाने में आयी... माता-पिताओंने कन्याओं को जानकारी दी। उन कन्याओने कहा - एक बार मनसे इच्छित किया हुआ वह (पति) अब दूसरा नहीं होगा। बीचमें एक रात बाकी है। हम आठ है... हमारेमेंसे कोई एक (भी) जंबूको चलित करनेमें समर्थ है। तो भी वह चलायमान न हुए तो ''जहाँ पति वहाँ सती...'' हम भी इनके मार्ग पर चल पडेंगे।

चित्रपट - ६. : धूमधामसे शादी हुई... आठों कन्या ९-९ क्रोड सोनामहोरें लाई.... । कन्याओंके मामाओंकी तरफसे और जंबू के मामा की तरफसे एक-एक क्रोड सोनामहोरें मिलीं (७२+९=८१) जंबूके पास अठारह करोड सोनामहोरें थीं। जंबू एक ही रातमें निन्यान्वे करोड सोनामहोरोंका मालिक बन गया।

चित्रपट - ७. : स्वर्णमोहरका ढेर महलके कोनेमें पडा है, रात्रिमें दरवाजे बंद करके आठों पत्नीयाँ जंबूकी चारों ओर बैठ गयी। फिर चलित करने के लिए अनेक युक्तियाँ की... परंतु जंबुकुमार तो आज जैसे पत्थर-हृदयी बन गये थे। वो जरा भी चलित नही हुए।

चित्रपट ८. : आखिर पराजित आठों को ऐसा बोध दिया कि आठोंका मन इस संसार से उठ गया। इतना ही नहीं, पाँचसो चोरके संग चोरी करने के लिए आया हुआ रव्याातनाम ''प्रभव-चोर'' भी परस्परके वार्तालाप सुनकर परम वैरागी बन गया। इसने भी जंबुके संग ही दीक्षा लेने का निश्चय किया।

चित्रपट ९. : प्रभातमें अब जंबुके माता-पिताको और कन्याओंके माता-पिताओंको यह बातकी जानकारी हुइ, तब उनहोने भी जंबुके साथ ही संयम (दीक्षा) लेनेका निश्चय किया।

चित्रपट १०. : राजगृहीके राजमार्ग पर (अभी तो क ही जिसकी शादीका वरधोडा निकला था, उसी मार्ग प जंबू,जंबूके माता-पिता, आठ कन्या, आठ कन्याओके मात पिता, और ५०० चोरोंके साथ जंबूकी दीक्षाका वरधो निकला।

चित्रपट ११. : वरधोडा पंचम गणधर (प्रभु महावीर प्रथम पट्टधर) सुधर्मास्वामीके पास पहुँचा। जंबू सहित ५ की एक ही साथ दीक्षा हुई। नगरके लोगोंके आश्चर्यका अवा न रहा। यह सत्य या स्वप्न ? यही इनकी समझमें नहीं रहा था !

चित्रपट १२. : क्रमशः केवलज्ञान पाकर जंबूस्वा सुधर्मास्वामीके पट्टधर बने... वे प्रभु महावीरकी दुसरी प पर आये। जंबूस्वामीके पट्टधर बने प्रभवस्वामी !

वाह ! अदभूत..... अद्‌भूत.. कमाल.... जिनशासनकी कैसी बलिहारी ! नात जातके भेदबिना, योग्य पर चोर जैसे चोरको भी प्रभुकी पाट पर स्थापन कर सकते यह शासन..! कमाल शासन..... ! अद्‌भूत शासन.... लोकोत्तर शासन....! जिनशासन.....!

संजूके मुखमेंसे यह सब एक साथ निकल पडा.... हा संजू ! राजू बोला : जिनवाणीकी कैसी असीम ताकत सुधर्मा स्वामीकी एक ही देशना-श्रवण मात्रसे जंबूके जीवन वैराग्यकी कैसी ज्वाला प्रगट उठी... । अप्सरा जैसी आठ आठ कन्याओंके कटाक्षबाण, और ऐसे अनेक कामबाणोंक झडी बरसते हुए भी जिसके एकाध रोंगटेमें भी काम का एका स्पंदन/स्पर्श कर सका नही... । सामान्य मनुष्यके तो य बसकी बात ही नहीं। आठमेंसे कोई एकाध भी हो तो भी क्षण ही सामान्य मानवोंका तो पतन ही हो जाय। परंतु जंबूमें प्रग हुइ वैराग्यकी ज्वालाने तो तत्क्षण ही पांचसौ छब्बीस नये दीप प्रगटा दिये। और इसीलिए ही यह जंबूमहल विख्यात ब गया, नहीं कि सोनारूपाके ढिग मात्र से....

संजूके रोम-रोम खड़े हो गये । अपनी नगरी महाब्रह्मचारी ऐसे महापुरुषोंके अवतरणसे वह गद्‌गद ह गया। उसका गला भर आया। वह आगे कुछ बोल नहीं सका। जंबूकी उस धरतीको वंदना अर्पित करके दोनों मित्र महल बाहर निकले। आगे के सफरके लिए प्रयाण किया..... लोगोंक भीड़के साथ वे भी आगे बढ़े... दूर.. नदी किनारे पहुँचना थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रपट १

चित्रपट २

चित्रपट ३

चित्रपट ५

चित्रपट ४

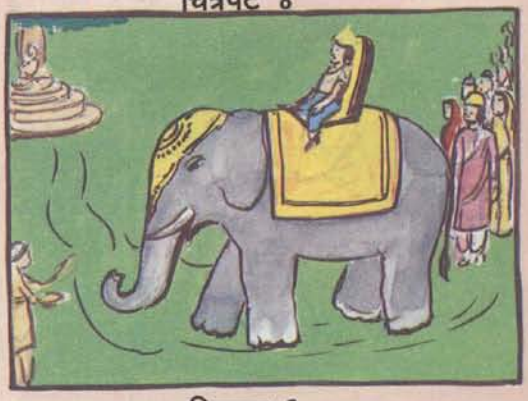

चित्रपट ६

मंज़ील लम्बी थी... सूर्य तप रहा था।

मित्रयुगल अपनी चालमें झड़प लाकर नगरके दरवाजेके नजदीक पहुँच गये। इस दरवाजेकी दो हाथी जितनी ऊंचाई थी। इसके मध्यमें प्रभु महावीरकी ध्यानस्थमुद्राकी प्रतिमा अंकित थी ..... इसके नीचे बड़ा धर्मचक और इसके आसपासमें अद्‌भुत कारीगरी वाले दो मृग भी कुतरनेमें आये थे.....। तदुपरांत इन्द्र-इन्द्राणी आदि अनेक कलाकृतिसे भरपूर स्तंभ वाले दरवाजे खास ध्यान खींच रहे थे। राजा श्रेणिककी सवारी जब भी यह दरवाजोंमें से पसार होती तबका दृश्य अनोखा बना रहता। मित्रयुगल उसी दरवाजेमेंसे पसार होकर आगे बढ़े। नगरीके बाहर नदीके घाट पर मेलेमें जनताकी भीड़ जमी थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

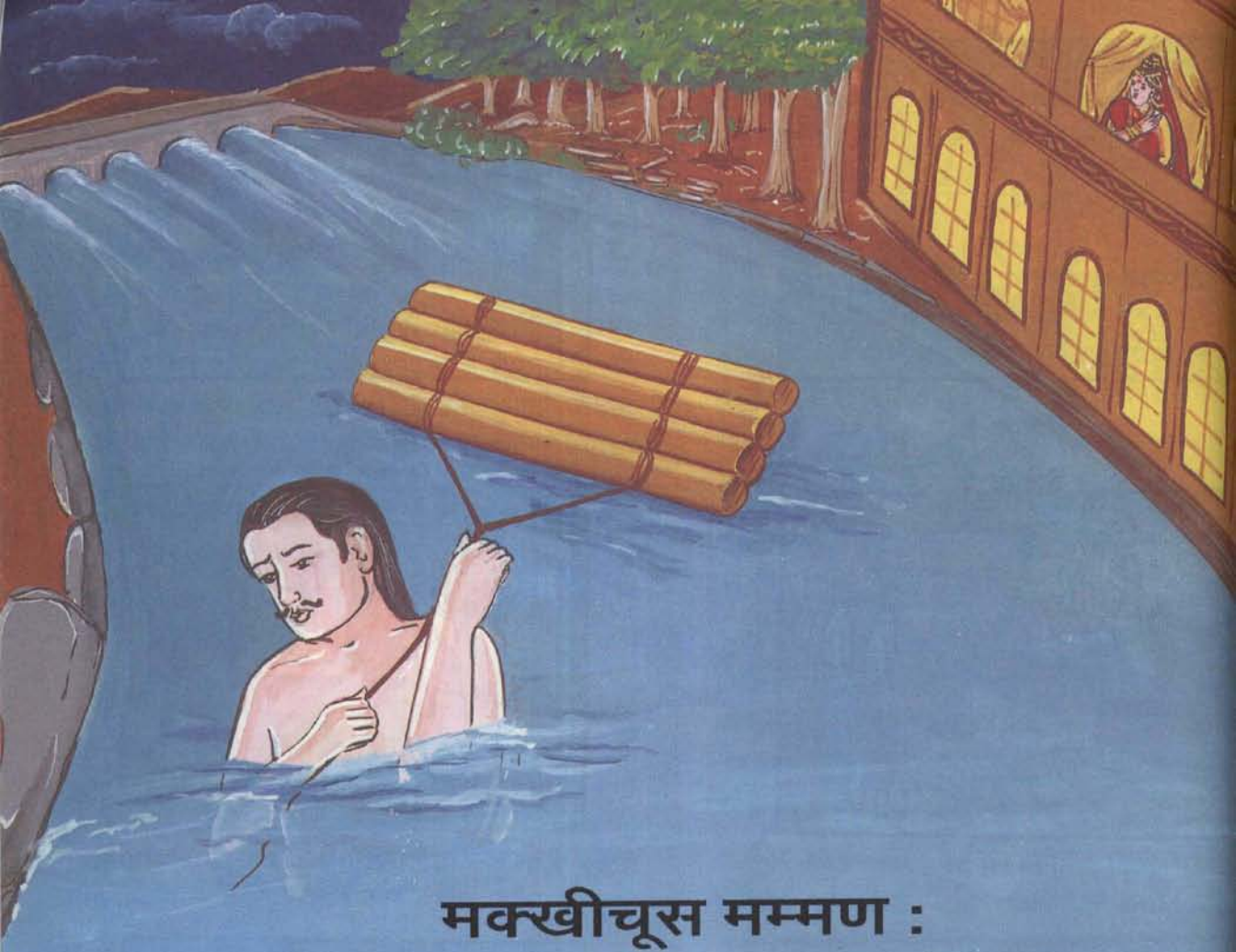

मक्खीचूस मम्मण : नदीतट पर मित्रबेलडी

नदीके तट पर दोनों मित्र एक वृक्षकी नीचे विश्रांति लेने बैठे। राजुको एक बात याद आई। उसने संजूको क - संजू! सारी राजधानीमें मक्खीचूस (कंजूस) के रूपमें प्रसिद्ध बने मम्मणसेठ - लँगोट पहनकर (सूर्यास्त बाद स्वयं) इसी नदीमें कूद पडता और दूरसे आते चंदनकी लकडीको खींचकर इसको बेंचकर इसके बद अत्यंत कीमती रत्नोंको इकट्ठा करता। इसी तरह इसने रत्नों और मणियोंसे भरे-पूरे दो बैल तैयार कि इसमें एक बैल संपूर्ण तैयार हो गया था। दुसरे बैलके दो सींग ही मात्र शेष थे, यह सींगको पूर्ण करनेके लिए ही इतनी मेहनत करता था।

वह इतना कंजूस था कि भोजन में सिर्फ चवला ही खाता था। और चवलाके संग तेल-वापरते। बस, यह श्रीमंतके नसी खानेके लिए तैल और चवला मात्र दो ही चीज थी। अकेले चवला खाने से वायु हो जाय... और तबियत बिगड़ जाय तो दवाईके खर्च हों... इसीलिए चवलाके साथ तैल लेते। सुबह उठकर कोई इसका नाम ले या सामने मिले तो... तो... अपशकुन गिना ज (माना जाता)।

वर्षाऋतुकी एक रात्रिमें झरोखेमें बैठी रानी चेलणाने यह श्रीमंत (मम्मण) को नदीमें छोटी धोती (लँगोट) पहनकर उत और चंदनके लकड़ेको खींचते देखा। चेलणाने अपने पति श्रेणिकको यह बताते हुए कहा कि आपकी नगरीमें ऐसे दुःखी बस इनकी जरा भी आप देखभाल नहीं करते ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजाने भी यह दृश्य देखा। उनके दिलमें दया यी। दूसरे दिन राजाने इसको राजसभामें बुलाया -

मम्मण बोला, मुझे दो सींग बैलके चाहिए। राजाने कहा इसके लिए इतनी तकलीफ !

मम्मण बोला - हाँ, राजन्।

राजा बोले - तुझे सींग तो क्या अच्छेसे अच्छी बैलोंकी ोडी चाहिए इतीनी दिला दुं ?

मम्मण बोला ! नही राजन् ऐसे बैल नही !

राजा बोले -(तो) कैसे बैल ?

मम्मणने कहा : मेरे घर पधारिये.....

राजा मम्मणके यहाँ पहुँचा। अंदर का कमरा खोलता ... वहाँ तो प्रकाश प्रकाश छा गया... !

राजाकी आँखे चकाचौंध हो गई। अंदर जाकर रत्नोंके ने दोनों बैलोंको देखकर वह बोल उठा..... ओह बापरे ! तनी समृद्धि तो मेरे कोश (भंडार) में भी नहीं है।

श्रेणिक तो वहाँसे चल पडे। परिग्रह संज्ञाकी राकष्ठामें पहुँचे पापानुबंधी पुण्यवाले मम्मणको वह (श्रेणिक) सोचता ही रहा .....

राजू बोला : संजू ! मम्मणके पास एक नया पैसा अनीति-अन्यायका न होते हुए भी धन उपरकी अत्यंत मूर्च्छाने इसको सातवीं नरकमें पहुँचा दिया। इसीलिए ही कहा है **लोभ तो पापका बाप है।**

संजू ! मिली हुई बुद्धि..... नीरोगी काया और लक्ष्मी यह तीनोंका जो सदुपयोग न हुआ तो वह तीनों भी निष्फल हैं। जीवनको उन्मार्गकी ओर फेंक देता हैं..

संजू बोला,

''राजू ! पापानुबंधिपुन्य यानि क्या''?

संजू ! जिस पुन्यसे मिली भोगसामग्री नये पाप बँधाकर दुर्गति और दु:खोंकी ओर धकेल दे - इसका नाम पापानुबंधीपुन्य।

संजू ! उस मम्मणने पूर्वभवमें पापानुबंधीपुन्य उपार्जन किया था। प्रभावनामें मिले सींहकेसरिया मोदक (अत्यंत सुगंधी मधुर) महाराज साहबको प्रेमसे वोहराया था।

परंतु यह लड्डु वोहराने के पश्चात् इसको मालुम हुआ कि यह लड्डु तो अत्यंत मधुर था तो लड्डु वापस लेने साधु के पीछे पडा। लड्डु वोहरानेके पश्चात् बहुत पश्चात्ताप किया।

संजू ! मम्मणने प्रेमसे लड्डु वोहरा दिया इससे वह अपार संपतिका मालिक बना। पर वोहरानेके बाद पश्चात्ताप हुआ..... इसीलिए वह कंजूस बना। वह संपत्ति को भोग तो न सका, बल्कि नरकमें जा पहुँचा।

संजू ! कोई भी अच्छा काम करनेके बाद खुशी हो - आनंदका अनुभव हो, मनहीमन इसकी अनुमोदना हो तो वह पुन्य अनेक गुणाकार साथ डब्बल हो जाता है..... वह पुन्यानुबंधिपुन्य पहचाना जाता है। जो सद्गति को प्राप्त कराता है और अच्छे काम करने के बाद पछतावा हो जाय तो समझना कि जो पुन्य उपार्जन हुआ वह पापानुबंधीपुन्य।

शालिभद्रका पुन्य पुन्यानुबंधी था। इसने पूर्वभवमें जैसे-तैसे भी अपने लिए प्राप्त की हुइ खीर अति हर्षित हुए मुनिभगवंतको वहोरा देनेके बाद मनहीमन खूब अनुमोदना की, जिससे दूसरे जन्ममें इसको निन्यानवे (९९) पेटी समेत भोगसामग्री तो मिली पर साथ-साथ इसको त्याग करने की शक्ति भी मिली - सर्वविरति मिली और सद्गति भी मिली।

संजू ! मम्मणका पुण्य पापानुबंधि था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

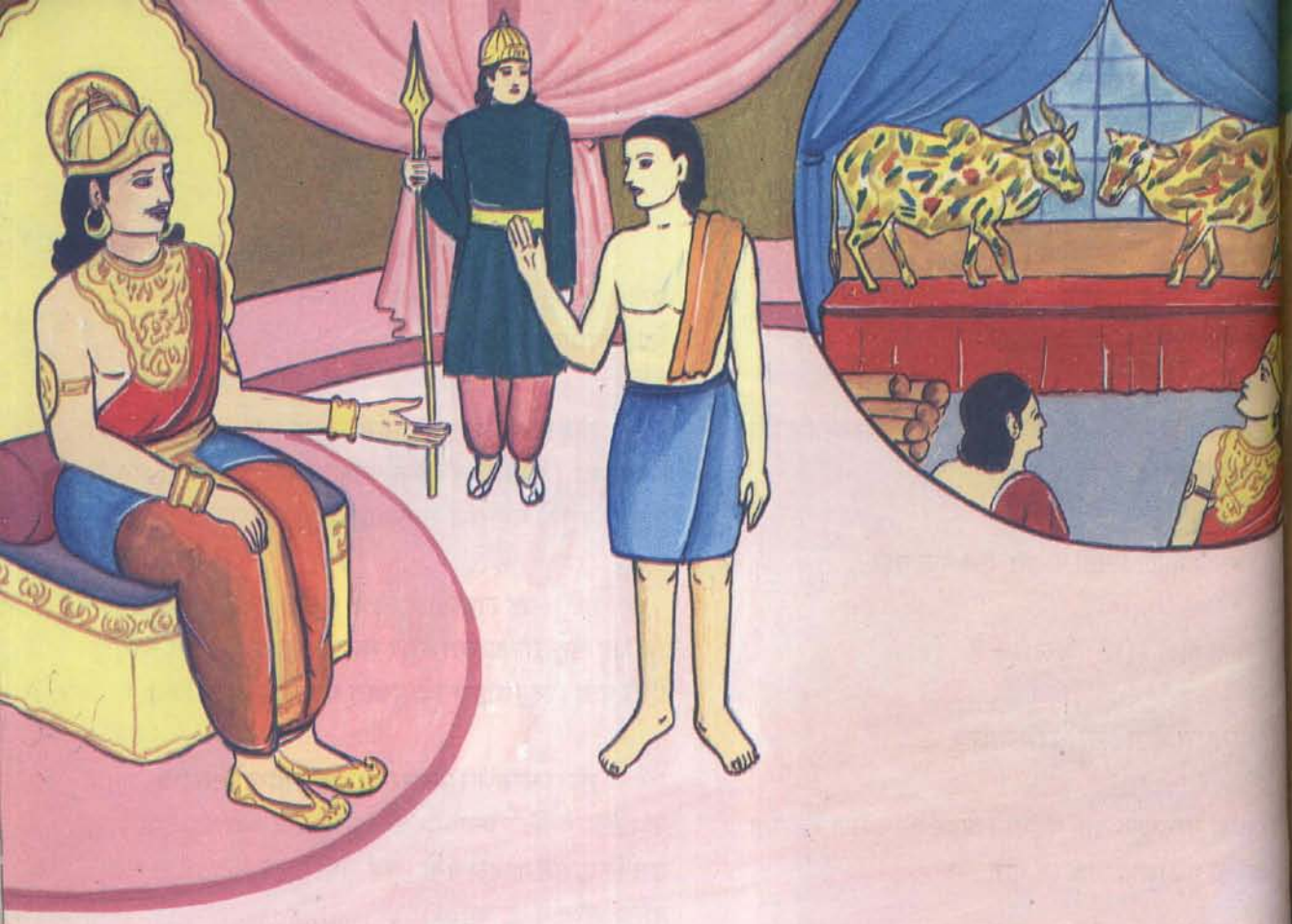

शालिभद्रका पुन्यानुबंधि था।

राजू ! ये शालिभद्र कौन था ?

संजू ! इसकी बात मे कल करूंगा।

दोनो मित्र घडीभर विश्रांति लेकर नदीके तट उपर ही आगे चलने लगे..... जहाँ लोग बहुत कम थे वहाँ एक स्तूपके पा मित्रयुगल पहुँच गया।

महाउपसर्गको सहन करनेवाले मेतार्यमुनिके चरण-पादुका इस स्तूपमें स्थापित थे। दोनों मित्रोंने उन चरणारविंदो भावपूर्ण नमस्कार कीया और नगरकी और जा रही मेले की भीड के साथ दोनो अपने घरकी और प्रयाण किया..... पर रास्त ठीक लंबा था। ''बात करते पंथ खूटे'' ऐसी लोकोक्तिको अनुसरते राजूने संजूके आगे मेतार्यमुनिकी जीवन-कथाका प्रार किया.....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

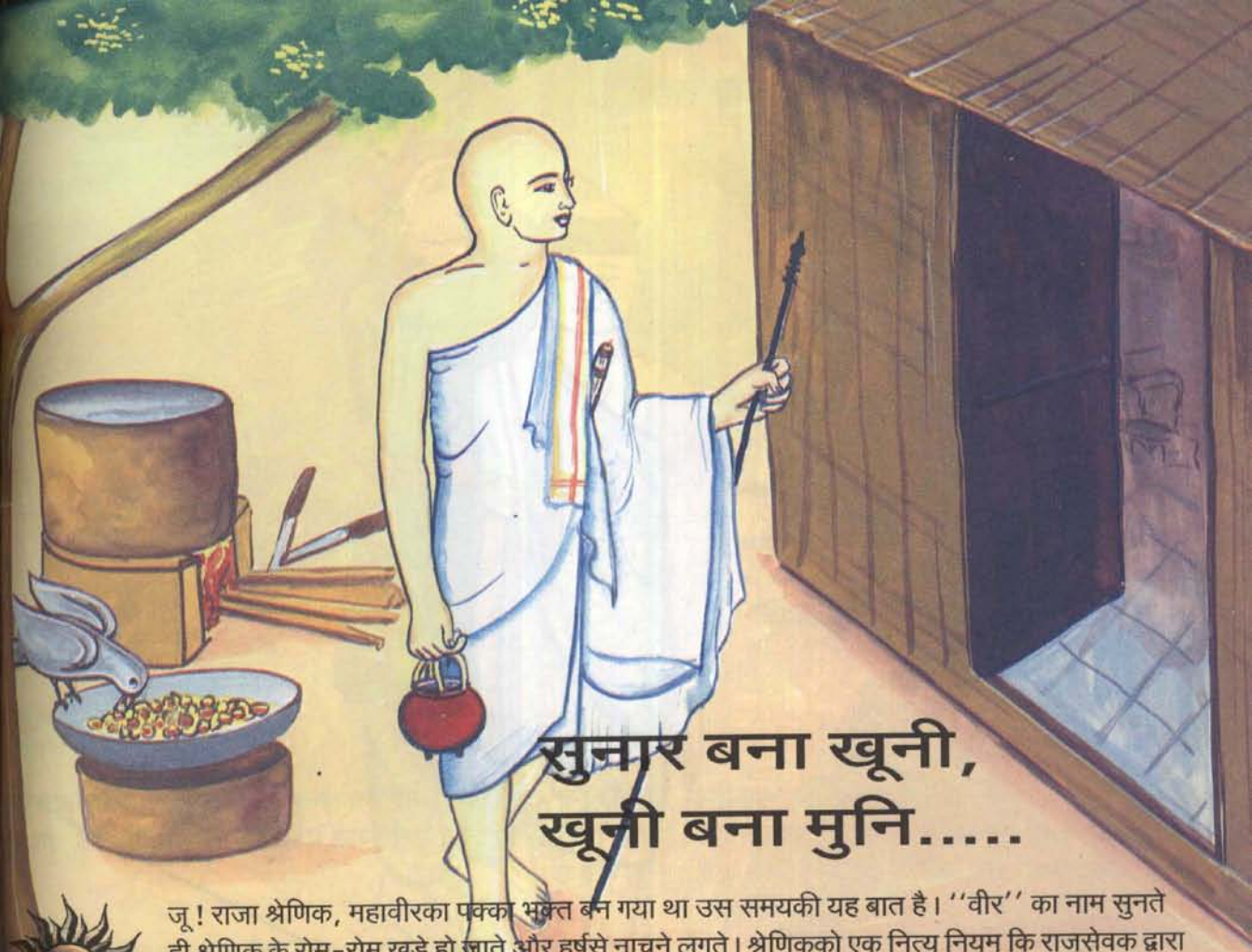

सुनार बना खूनी, खूनी बना मुनि.....

संजय ! राजा श्रेणिक, महावीरका पक्का भक्त बन गया था उस समयकी यह बात है। ''वीर'' का नाम सुनते ही श्रेणिक के रोम-रोम खडे हो जाते और हर्षसे नाचने लगते। श्रेणिकको एक नित्य नियम कि राजसेवक द्वारा किसी एक दिशामें प्रभु ''महावीर विचर रहे हैं''... ऐसा समाचार मिलते ही तुरंत उस दिशाकी ओर कुछ आगे बढकर एकसो आठ स्वर्णके जौ का साथिया बनाकर भावविभोर हृदयसे रोमांचित-देहद्वारा प्रभुकी स्तुति और चैत्यवंदन करते।

संजय ! १०८ (एकसो आठ) स्वर्ण-जवके लिए इसने एक स्वर्णकारको खास आदेश दे रखा था....। सुनार रोज १०८ स्वर्ण-जव तैयार करता था..... एक बार सुनार (स्वर्णके) जवला बना रहा था। इतने में ही मासक्षमणके तपस्वी मेतार्यमुनि इसके घर भिक्षार्थ जा पहुँचे। सुनारने खडे होकर अहोभावसे महात्माको भिक्षा दान किया। किन्तु बात ऐसी बनी कि रसोड़ेमें भिक्षा वोहराने जाते, जो स्वर्ण-जवके दाने थे - इसको अनाजके दाने समझकर क्रौंच पक्षी चुग (खा) गया। महात्मा तो भिक्षा लेकर स्वस्थानकी और लौटे। आहार लेकर इसी नदीके (घाटके) पास कायोत्सर्ग ध्यानमें मग्न बन गये।

भिक्षादानके बाद सुनारने देखा तो जौ दिखनेमें आया नहीं। इसने मुनिके वेशको धतिंग समझकर मेतार्यमुनिने जवले चुरा लिये होंगे ऐसी शंका हुइ। वो तो दौड़ा जहाँ महात्मा ध्यानस्थ थे..... वहाँ..... क्रोधसे अंधा बना उसने पानीमें भिगोये हुए चमडेको मुनिके मस्तकको चारों ओरसे लिपटाकर खींचके बाँध दिया। ऊपरसे मध्याहन तापसे सूर्यकी धूप लगते ही व्याघ्रचर्म सहसा संकुचित होने लगा... इसके साथ मुनिके मस्तककी नसें भी खिंचने लगीं। असह्य वेदनाको समभावसे सहन करते मेतार्यमुनि आत्मध्यानमें एकाग्र (एकचित) बन गये। योग-निद्रामें सो गये। ''वेदना तो जड़ ऐसे देहको हो रही है'' ''देह दुःखं महाफलं'' महावीरप्रभुके श्रीमुखसे सुने इस महावाक्योंको इन्होंने सिद्ध कर दिखाया। इन्होंने सचमुच कम्मर कसी थी। मस्तककी नसें टूटने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लगीं.... परंतु साथमें मोहनीय आदि कर्म-प्रकृतियाँ भी बिल्कुल टूटने लगीं। महात्माको धर्मराजकी तरफसे केवलज्ञानकी भेट मिली। आयु पूर्ण करके महात्मासे परमात्मा बने। मोक्षमें गये। श्रेणिकने उस स्थल पर महोत्सव मनाया.....। और वह महात्माकी कायमी स्मृतिके लिए स्वर्ण-रत्नतसे जड़ीत स्तूप बनाया।

इस तरफ वह सुनारकी पत्नी कामसे रहे लकडे लेने गई। इसकी आवाज होते ही वह कौंच पक्षी अचानक जग गया और बीट कर दी। बीटमेंसे जवले निकले। जवलेको देखने के साथ ही सुनारको महात्मा बिल्कुल निर्दोष है... इसकी जानकारी हुई। वह भयभीत बन गया। राजाको मुनिहत्याकी जानकारी होते ही मुझे मौतके घाट जाना ही होगा.... इसी डरके कारण उसने वोहरे मेतार्यमुनिके रजोहरण आदि मुनिवेश पहन लिया और साधु बन गया। आखिर, इसने भी सच्चे मुनि बनकर आत्मकल्याण साध लिया !

यह मेतार्यमुनि राजगृही नगरी के श्रेष्ठिपुत्र थे। नव-नव रूपरमणीसे शादी हुई थी। तो भी पूर्वभवके मित्रदेवके बोधसे पू संसारको त्याग कर सर्वविरति पंथ पर डग भरे... और इसी भवमें मुक्तिको वरे।

संजू ! मुनिको कौंचपक्षीने जवला चुग लिया है, यह खबर थी तो भी सुनारको कहा नहीं। यदि सुनारको कहे तो सुनार उस पक्षीको चीरकर इसके पेटमेंसे जवला निकालते.... ऐसे एक जीवकी हत्या हो जाने का पूरा संभव था, जो मेतार्यमुनिको इष्ट नहीं था। वे तो स्वयं मरकर भी अन्य जीवोंको बचानेके अत्यंत शुभ भावमें मस्त थे।

संजू तो मरकर भी अन्यको जीवित रखनेवाले यह समताके सागर मेतार्यमुनिको लाख लाख वंदन करता रहा। इसकी जीवन कथामेंसे ''सहन करे यह साधु'' - ''स्वयं मरकर भी सबको जीवित रखनेकी भावना रखे वह साधु.....'' ऐसा बोधपाठ ग्रहण किया। खुदको प्राप्त हुए ऐसे निर्ग्रंथ गुरुओंको लेकर वह जातको बड़भागी मानने लगा। अब घर बहुत दुर नहीं था। दोनों मित्र त्वरित गतिसे चलते-चलते नगरके मुख्य चौराहे पर आ पहुँचे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

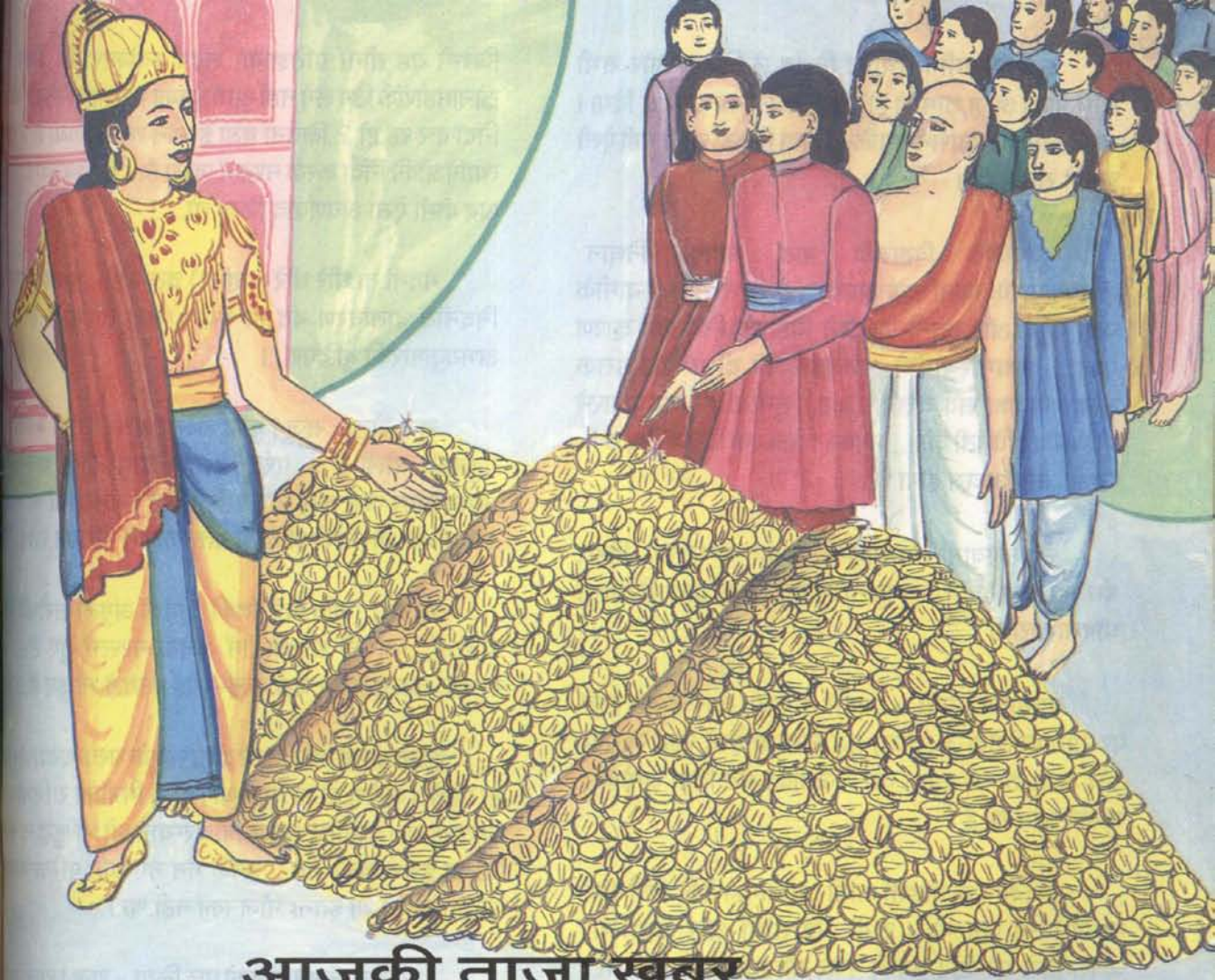

आजकी ताजा खबर.....

जू बोला : संजू! कौतुक उत्पन्न हो, ऐसा एक बनाव यहाँ बना था। इस समय वह नगरीमें पूज्य-सुधर्मास्वामी बिराजमान थे। उनकी वैराग्यसे बहती वाणी सुनकर इस नगरका एक लकड़हारा दीक्षा लेने तैयार हुआ। सुधर्मास्वामीने योग्य जानकर इसे दीक्षा दी। पर ''लोक'' किसका नाम ? वह तो सीता जैसी महासतीयोंको भी जैसे तैसे कहे तो लकडहारे को कैसे बाकी रखे ? बस, अपने कुटुंबका जीवनयापन कर सकता नहीं था..... और कमानेके लिए तकलीफ पड़ती थी-खानेके लिए दीक्षा ली.... बात तो फैलने लगी..... एक मुँहसे दूसरे मुँहपर... वायुवेगसे यह गरमागरम खबर सारे नगरमें फैल गई। और वहाँ तक कि जो सुधर्मास्वामीके कान तक पहुँची।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुधर्मास्वामीने त्वरित निर्णय ले लिया। और सभी साधुओंको आज शामको ही विहार करने का आदेश दिया। अपने निमित्तसे शासन-मालिन्य होता हो वहाँ रहना नही ऐसी इनकी समझ थी।

पूज्यश्रीके विहारकी बात महाबुद्धि-निधान अभयकुमारके कानों तक आयी.... वे तुरंत सुधर्मास्वामीके पास पहुँचे और इतनी जल्दीसे विहारके निर्णयका कारण पुछा.... सुधर्मास्वामीने लकड़हारे की दीक्षा और इसके लोकापवादका सर्व वृत्तांत (कह) सुनाया। अभयकुमारने पूज्यश्रीको विनंती की.... भगवन्! मात्र एक दिनके लिए रुक जाओ, सब अच्छा होगा।

सुधर्मास्वामीने अभयकुमारकी बात मान्य रखी। विहार बंध रहा। दूसरे दिन अभयकुमारने राजसेवकों द्वारा पूरे नगरमें घोषणा करायी।

नगरजनों! सुनो..... सुनो.... सुनो, नगर के चार रस्ते पर सोनामहोरोंके ३ (तीन) बड़े ढिग जाहिरमें रखा जायेगा और आज शामके समय वह विजेताको भेंट दिया जायेगा। सबको आमंत्रण है।

और शाम तो दौडती आयी। सोनामहोरोंकी चारों ओर मानवमेदनी जम गई। सभी अगासीयाँ और अटारियाँ जनसमूहसे भर गई। सबकी नजर सोनामहोरकी तरफ थी। इन सोनामहोरोंका विजेता कौन बनेगा, इसकी ओर ही सबका ध्यान केन्द्रित बना था।

अब अभयकुमार सबके बीचमें आ गये। और स्वयं घोषणा करते हुए कहा, जो व्यक्ति जीवन तक, कच्चे पानीको, अग्निको और स्त्रीको - स्पर्श भी नही करे, इसको यह तीनों स्वर्ण के ढिग भेट दिये जायेंगे...। यह ताजा समाचार सुनते ही जनतामें मौन छा गया। मुनि बने कठियारेका अवर्णवाद करनेवाले मनुष्यों के मुँह ही बंद हो गये। बाप रे... स्त्रीको, पानीको और अग्निको स्पर्श किये बिना क्या जी सकेंगे ? जनमेदनीमें गुनगुनाहट शुरु हो गई।

आखिरमें अभयकुमारने मौन तोड़ा और निंदक लोगोंको उद्देश्यकर कहा - तुम लोगोंको कोई धंधा ही नहीं। है ताकत इसमेंसे कोई एक भी प्रतिज्ञा स्वीकारनेकी ? जो नहीं, तो जिसने यह तीनों प्रतिज्ञाको सहर्ष स्वीकारा है, फिर सोनामहोरोंके ढिग लेने नहीं आये इनकी प्रशंसा करनेकी निंदा कर रहे हो ? कितना बडा इन्होंने त्याग किया है ? त्यागिओंकी निंदा करके नरकमें जाना है... ? खबरदार... अब कभी ऐसा अवर्णवाद किया तो... !

मेदनी तो धीरे धीरे (वहाँसे) चल पड़ी... पश्चात् नि निंदनीय वातावरण बंद हो गया। संजू तो खुश हो अभयकुमारकी बुद्धिपर...।

राजू बोला : संजू ! बुद्धि लक्ष्मी और नीरोगी काया बहुतको मीली है। परंतु इसका सदुपयोग करने अभयकुमार जैसे कोई विरल ही होते हैं। यह तीनों चीजें सन्मार्गकी ओर न ले जावे तो पतन कराये बिना न रहे।

संजय! ''गाँव वहाँ गंदकी'' पांचों अंगुली सरीखी न होती हैं... अपनी राजधानीमें अनेक नररत्ने हुए हैं... मम्मण, कालसौरिक जैसे कोई-कोई कोयले भी हुए हैं...

इतना बोलते-बोलते तो दोनों संजूके घरके दरवाजे आ पहुँचे। अंधेरा तो हो चुका था। दोनों मित्रोंको रात्रिभो का त्याग था। इसीलिए नगरयात्रा दरम्यान जो भी शुद्ध ना मिलता इससे चला लेते... इनके मन नगरीकी परिक्रम्मा जितना महत्त्व था इतना भोजनका नहीं था।

अलग होते संजूने राजूको पूछ लिया - राजू! राजध की अब कीतनी यात्रा बाकी है ... ?

राजू बोला : संजू राजगृहीके लगभग घटनास्थलों तो हम स्पर्श कर लीए... बाकी है मात्र राजगृहीके विख्य पंचपहाड़ और इनकी स्पर्शना। कल हमें नगरीके चतु महाद्वारकी ओर जाना है - कल जल्दी उठना होगा... चल जाना असंभव है। क्योंकि पूरा रास्ता काटकर नगरके बा रहे यह पंचपहाड़का चढाई भी करनी होगी। क्योंकि वहाँ स्तूप और मंदिरें भी महामुनियोंकी दिगंतव्यापी य कीर्ति अकबंध रखकर खड़े हैं। इस लिए कल भौर होते ही घर आ जाऊंगा। इस तरफ ही अपनी यात्राका प्रारंभ होग

दोनों अपने अपने घर चले। परिश्रमके कारण घर जा तुरंत ही गहरी नींद में सो गये... एक अलग ही दुनियामें पहुँचे। इस दुनियाका नाम था... **स्वप्नलोक।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजधानीके चतुर्थ द्वारकी ओर.....

- स्वप्नलोकसे सत्यलोक की और...
- रंगके रसिया...
- गोरी ! तुझे इतना कौनसा दुःख ?
- मित्रयुगल : पंचपहाड़की स्पर्शनामें मशगूल...
- नामी चोरकी गुफामें...
- गुणीजन मन वसिया...
- भोगनिष्ठ बनता है... ब्रह्मनिष्ठ : रोमांचक धटना
- ''राजगृह'' नाम कैसे हुआ...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

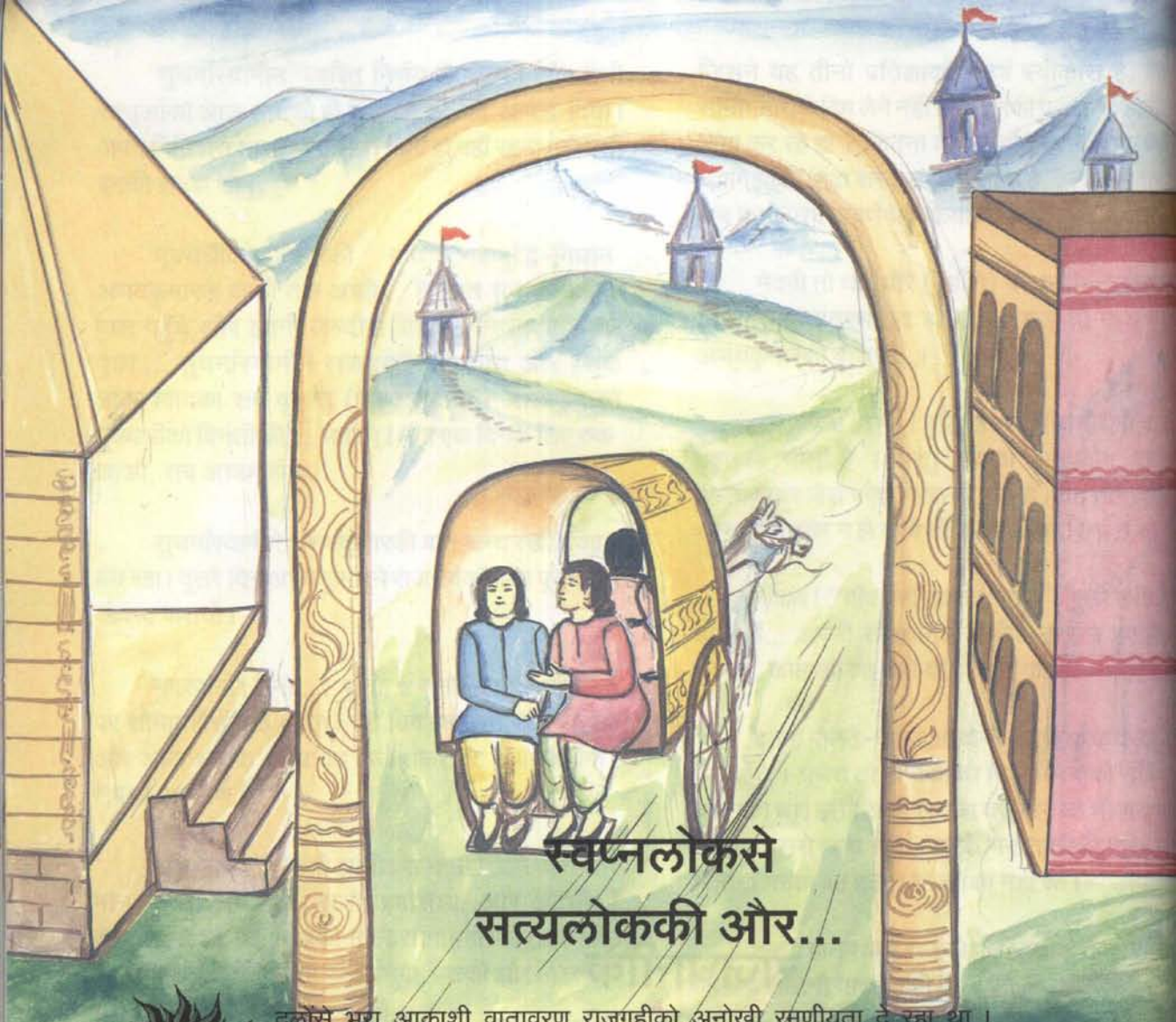

स्वप्नलोकसे सत्यलोककी ओर...

बादलोंसे भरा आकाशी वातावरण राजगृहीको अनोखी रमणीयता दे रहा था। कलकी ऊष्माने आज शीत लहरोंको फैलानेमें अच्छा साथ दिया। राजगृहीकी पर्वतीय हारमालाओं संग मैत्री जोड़नेके नाते जैसे कि बादल गिरि-शृंगोंको चुंबन करके आगे बढ़ रहे थे। राजधानीकी आमजन प्रकृतिकी गोदमें अभी मीठी नींद ले रही थी। स्वप्नलोककी दुनियामेंसे जागृत राजू सत्यलोककी स के लिए अरुणोदय हो इसके पहले ही संजूके घरकी ओर चल पडा। संजू भी झटपट प्रातःकार्य पूर्णकर राजूकी रा हवेलीके नीचे मार्ग पर खड़ा था। संजूने राजूको प्रणाम किया। राजूने संजूको अंजलि की।

दोनों अद्वितीय घटनाके आलय समान पवित्र पंचपहाड़की स्पर्शना हेतु चल पड़े। रास्ता बहुत दूर था। प्रातः सम चौराहे पर पहुँचे पश्चात् एक टाँगागाडी मिल गई। तबड़क... तबड़क... तबड़क... त... ब... ड... क... मित्रद्वयका र जनता शून्य मार्ग पर तेजी गतिमें दौड़ रहा था... कूकडे...कूक..कूक..मुर्गेकी मधुर आवाज़ जनताको जगा रही थी। न नववधूओंके घम्मर विलोणे संस्कृतिका साद दे रहे थे। मंदिरोंमें घंटारव शरू हो गये थे। मंद-मंद शीतल वायु नगरजनों जगाने में निष्फल बन रहा था।

आज जो प्रथम घटना-स्थल पर जाना था वह रंगसभर और रसभर कहानी राजूने शुरू की...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

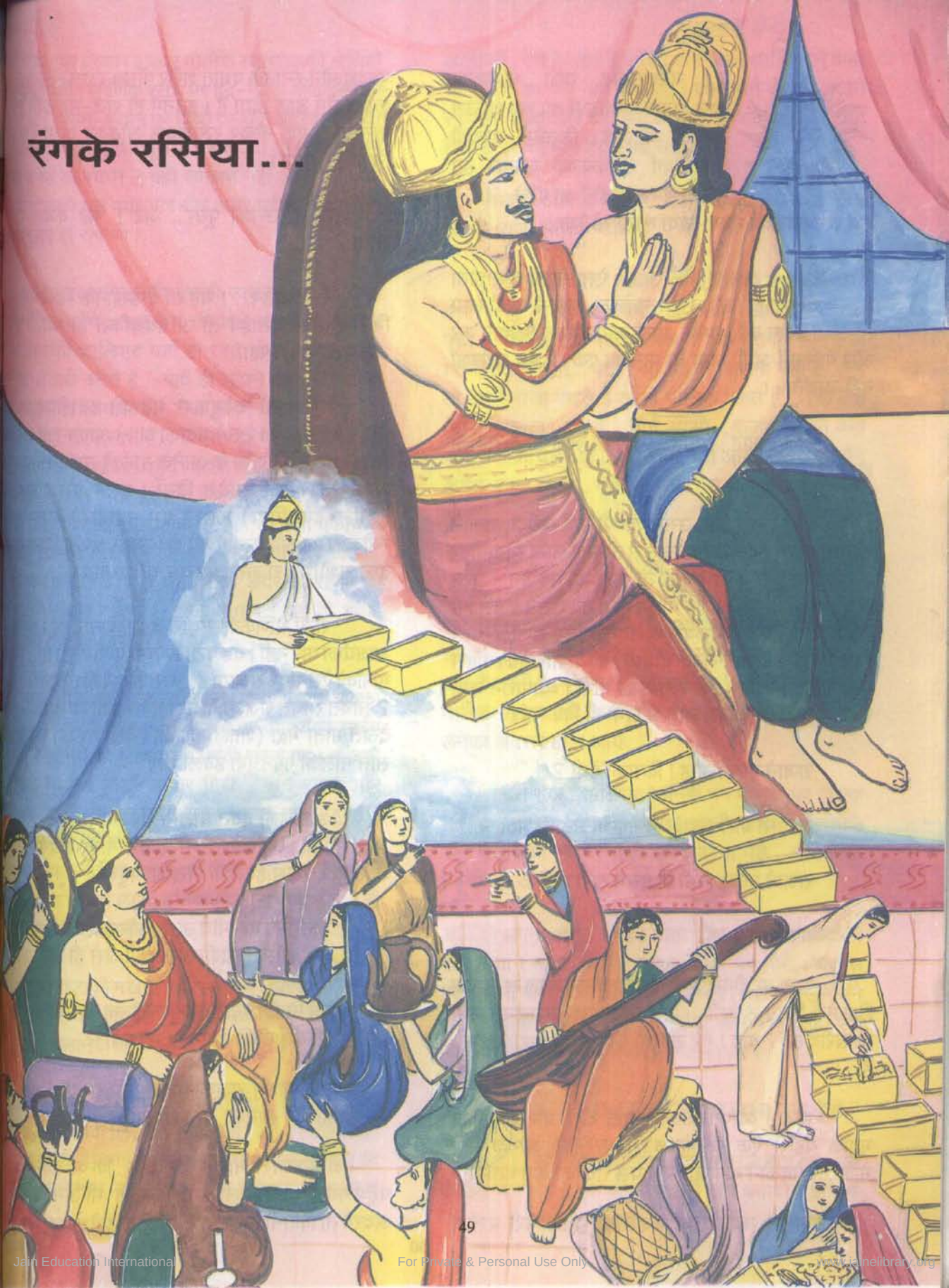

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संजू! मगधसम्राट राजा श्रेणिकका पुण्य-प्रताप मध्याह्न में तप रहा था उस समयकी बात है। कितनेही परदेशी व्यापारीवर्ग रत्नकंबलके व्यापार हेतु राजधानी-राजगृहीमें आ पहुँचे... ।

एक रत्नकंबलका मूल्य-सवा लाख सोनैया...

बाप रे...! संजू बोल उठा... ऐसा उसमें क्या होता है... ? राजू बोला : संजू ! ये रत्नकंबल, ठंड़ी में ओढी जाय तो उष्मा प्रदान करें। गर्मीमें ओढ़ी जाय तो ठंडक प्रदान करे और बारिसमें ओढ़ी जाय तो पानीका एक भी बूँद शरीरको नहीं स्पर्शते... ।

संजू : आह...! वाह...! राजाने सभी ही खरीद ली होगी ?

राजूने कहा : ना, उसने एक भी नहीं खरीदी, राजाने सोचा एक रत्नकंबल खरीद करने से तो सवा लाख सोनामोहर प्रजाके हितके लिए खर्च करूँ तो प्रजा आबाद बने... परंतु संजू ! बादमें चेलणाको जब मालूम हुआ तब उसने कमसेकम (अपने लिए) एक रत्नकंबल खरीदनेके लिए राजाके पास जिद्द पकडी। राजाने सेवक दौड़ाये। वे व्यापारियोंको वापस बुला लाये...। राजाने एक रत्नकंबल माँगी। व्यापारीने कहा सोलह (१६) रत्नकंबल लाये थे सभी ही बिक गईं।

राजाने पूछा : ओह ! किसको बेंची ?

व्यापारी बोले आपके ही नगरके शेठाणी भद्राको...

राजाने पूछा : सभी ही इसने खरीद लीं ?

व्यापारी बोले : हाँ।

राजा मनहीमन सोचने लगा एक रत्नकंबल खरीदनेके लिए मेरी हिंमत न चली...। और मेरे ही एक प्रजाजनने सभी ही खरीद लीं ? वाह ! मेरे राज्यमें ऐसे श्रीमंत पुण्यवंत बसें हैं... ।

राजाने व्यापारियोंको बिदाई दी। और सेवकोंको भद्राके यहाँसे एक रत्नकंबल (मूल्यसे) ले आनेके लिए भेजा... । सेवकोने वहां जाकर वापस राजाको बात बतायी...

राजन् ! भद्रामाताने कहलाया है कि मेरी बत्तीस पुत्रवधूओंने स्नानके पश्चात् शरीर पोंछकर उन रत्नकंबलों कूड़ेखानेमें डाल दिया है। इतनेमें ही राज-महलकी सफ़ करनेवाला एक नौकर रत्नकंबल ओढ़कर कूडा (कचरा) निकालने आया।

राजाने उसको पूछा... अरे ! यह कंबल कहाँ लाया ?

राजासाहब... ! यह तो कूड़ेखानेके डिब्बेमेंसे मु मिली है। राजासाहब तो आश्चर्यचकित हो गये... उन आश्चर्यका पार न रहा...

श्रेणिक तो कौतुकसे भद्राकी हवेलीपर जाने लिए बावरे हो गये। उसने भद्राको अपने आगमनका समाचा भेजा। भद्राने भी राजा के आनेके मार्गको सुशोभित करने अपने सेवकोंको आदेश दिया। इसमें गोभद्रसेठ, (शालिभद्रके पिता) जिसने प्रभु महावीरके पास चा स्वीकारा था और स्वर्गमें गये थे। उसने अपनी दिव्य सम द्वारा सुशोभित राजमार्ग पर चार चाँद लगाये।

राजा श्रेणिककी सवारी वहाँसे पसार हुई। श्रेणिव आश्चर्यका पार नहीं। यह वृद्धा कितनी पुण्यशाली है... जि मार्गोंको ऐसे सुंदर सजाया हैं... उसकी हवेली तो कैसी होगी ? सोचते सोचते राजा मार्गों पर विविध प्रकारके नाटक-चे देखते माता भद्रा (शालिभद्र) की हवेली पर आ पहुँचे। सात मालकी गगनचूंबी हवेली थी।

और उसी वक्त बाल-सूर्यकी सवारी के साथ और संजूकी घुड़सवारी भी राजधानीके मूर्धन्य श्री शालिभद्रकी उस हवेलीके पास आ पहुँची।

दोनों मित्र वहाँ नीचे उतरे। और हवेलीके सामने देख ही रहे... यह हवेली इन्द्रकी अमरापुरी जैसे ही लग रही थ

दोनो मित्रोंने हवेलीके सामने बैठक जमायी...। संजू इस रंगभरी कहानीकी तंद्रामें ही खो गया।

इसने साश्चर्य राजूको पूछा... फिर क्या हुआ... राजूने आगेकी बातका प्रारंभ किया।

श्रेणिकको तो मालूम भी न रहा... कि वह हवेलीके पहुँच गये हैं... जो हवेलीके बाह्य रूपरंग भी अनहद है... अंदरमें तो कितनी निराली होगी ? राजा प्रवेशद्वार पर पहुँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

82798

द्राने ओवारणा लिया। द्वारपर मोतीके स्वस्तिककी श्रेणियाँ मा दे रही थीं। सुवर्णके स्तंभ पर इंद्र-नील-मणिके तोरण ल रहे थे। स्थान-स्थान पर दिव्य वस्त्रोंके चंदरवा बँधे थे। ी हवेली देवताई सुगंधी चूर्णोंसे महक उठी थी। राजाके मन ह सत्य था या स्वप्न ? वही समझमें नहीं आता था। वह वयंके महलको भूल गया और कोई अमरापुरीमें पहुँच गये हो सा अनुभव हो रहा था।

शालिभद्रको मिलनेकी इसकी उत्कंठा बढ़ गई। वह हली मंज़िल पहुँचे... झूलते व चमकीले तोरणोंको देखकर सको लगाकी शालिभद्र यहाँ ही रहते होंगे... ! वह अंदर ने की तैयारी करते है... वहाँ ही भद्राने कहा - यहाँ तो ारे नौकरोंका आवास हैं... राजा मनमें चमका... बापरे... कर भी ऐसे घरमें रहते हैं... ? ऐसा तो मेरा राजमहल भी हीं... राजा दूसरी मंजिल पहुँचे। पहली मंजिलसे वहाँ ज्यादा मक थी... राजा अंदर प्रवेशके लिए जा रहे थे। तब कहा या की यह तो हमारी दासियोंका घर है... राजा तो चकाचौंध गया... उसने तीसरी मंजिलकी ओर पाँव रख दिया... सकी चमक कुछ और ही थी... राजा अंदर जा रहे थे कि हाँ भद्राने रोककर कहा... राजा साहब ! यह तो हमारे हमानोंके रुकनेका स्थान है...।

भद्रा, श्रेणिकको चौथी मंजिलपर ले गई। जहाँ खुदका स था। श्रेणिकके दिलमें तो आश्चर्य पर आश्चर्यका सर्जन ता था। इतनेमें तो श्रेणिककी अंगुठी सरक गई। न जाने ने बड़े महलमें कहाँ जाकर गिरी... खुद राजा और जसेवक इनकी तलाश करने लगे। भद्रको मालूम हुआ... सने तो इससे भी बढ़िया ऐसी कितनीहीं अंगूठीयोंसे भरा क सुवर्ण थाल राजा सन्मुख रख दिया। राजा तो देखते ही गया... वह सोचने लगा। दुनियाकी सारी पुण्याई यहाँ ही बसी है ऐसा लगता है...

भद्राने राजाको मखमली सिंहासन पर बैठाया और खुद तवीं मंजिलपर दिव्यभोग-सुखोंको अनुभव कर रहे लिभद्रको बुलानेके लिए गयी।

देव बने शालिभद्रके पिताश्री प्रतिदिन शालिभद्र और की ३२ वधुओंके लिए ३३ भोजनकी, ३३ वस्त्रोंकी और आभूषणोंकी देवताई पेटियाँ भेजते थे। आज उपयोग की वस्तुएँ दूसरे दिन पास (बाजु) वाले कूड़ेखानेमें डालने में आती थी। ऐसे देवताई सुखोंको भोगनेवाले शालिभद्रने कभी भी जमीन पर पाँव नहीं रखा था। वह गर्भमें था तब भद्राने स्वप्नमें शालि यानि चावलके छोड़ोंसे हराभरा खेत देखा था जिससे इसका नाम शालिभद्र रखा गया।

भद्राने आवाज लगाई.. बेटा शालि ! आओ... नीचे आओ, राजा श्रेणिक पधारे हैं...।

शालिभद्रको तो ''राजा'' क्या वह भी पता नहीं था। इसने कहा माताजी ! कदापि नहीं और आज मुझे क्यों पूछा ? वो किरानेको वखारमें रख दो और मुँहमाँगे दाम दे दो। तब माताने कहा... बेटा ! श्रेणिक वो किराना नहीं है, इन्हें तो अपने राजा कहते हैं अपने मालिक कहते हैं... (वो कहें ऐसे हमें करना) आओ... नीचे आओ... राजाके दर्शन करो और राजाको दर्शन दो... शालिभद्र नीचे आये। उसके कानोंमें कुंडल चमक रहे थे... गलेमें नवसेरा हार था। कांडेमें रत्नबंध था।

राजाने इनको गोदमें लिया... राजाके शरीरकी ऊष्मासे शालिभद्रको पसीना-पसीना हो गया। राजा उसकी सुकुमारताको नीरखता ही रहा... आखिर चूमी भरकर उसको छोड़ दिया। राजाने वहाँसे बिदाई ली... परंतु शालिभद्रको अब चैन नहीं है। मेरे सिर पर भी मालिक !!! खैर अब एक ऐसे मालिक सिरपर रखूँ कि कदापि अन्य कोई मालिकका सहारा लेनेका अवसर ही न आये...

बस संजू ! शालिभद्रने मनही मन महावीरको ही एक मालिक बनानेका निर्णय ले लिया। महावीरके पथ पर जानेके बाद श्रेणिकको भी चरणोंको चूमने आना पड़े... बादमें वह मालिक न रहेगा...।

अपना अटल निर्णय माता और बत्तीस पत्नीयोंको बता दिया। माता मूर्च्छित होकर धरती पर गिरी। बत्तीस पत्नीयाँ भी चौंक उठीं। आँखोमेंसे बूँद-बूँद (जैसे) आँसू गिराने लगी। शालिभद्रने सबको समझाया और रोज एक-एक पत्नीका त्याग करनेका विचार अमलमें रखा।

संजू बोला... राजू ! शालिभद्रका इतना पुण्य कैसे ?

संजू ! पूर्वभवमें गवाल का अत्यंत गरीब बेटा था। उस की हठ पर माता ने एक बार जैसे तैसे खीर बनादी। इतनेमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

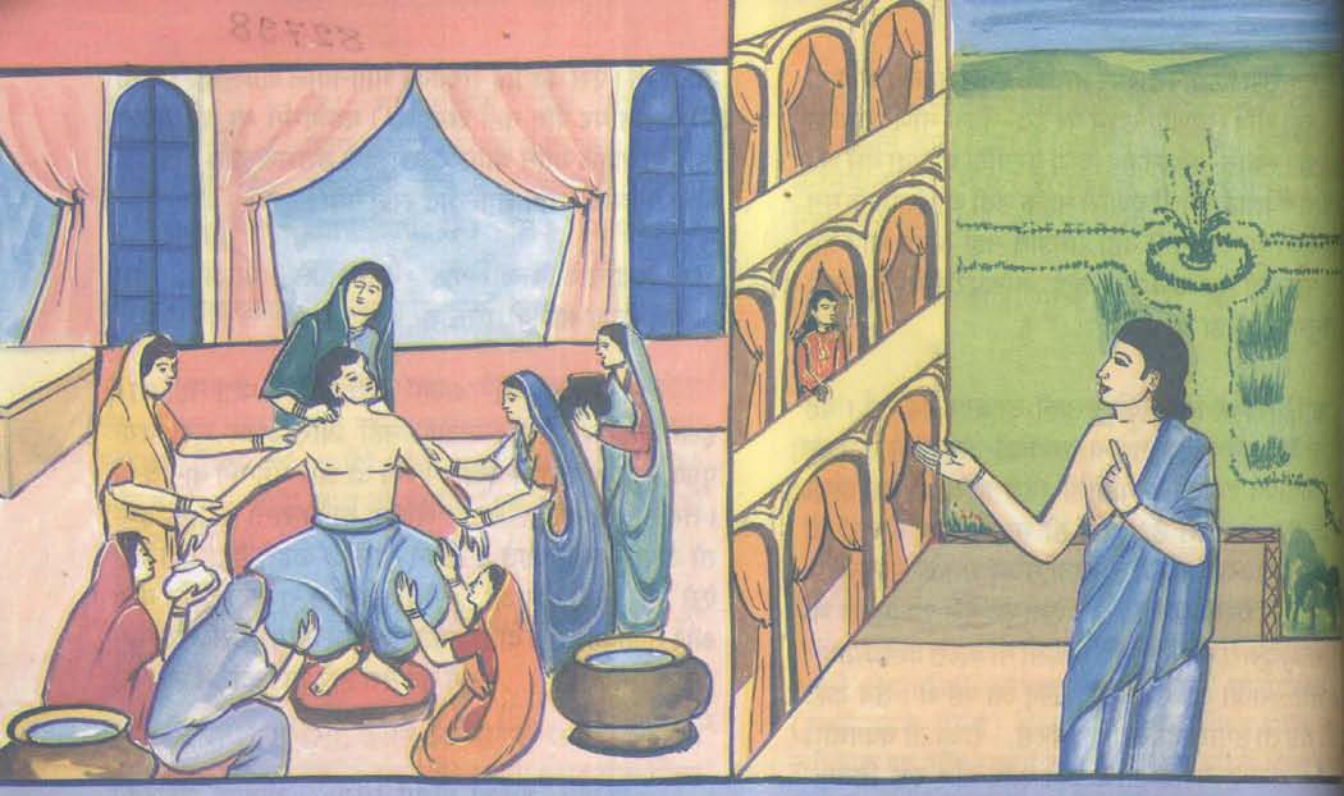

मासक्षमणके तपस्वी महात्मा वहाँ भिक्षा हेतु पधारें... इस गरीब लड़केने तो मेहनतसे इक्ठ्ठी की हुई... जिंदगीमें प्रथमवार खानेके लिए मिली खीर ऊँचे अहोभावपूर्वक तपस्वी मुनिराजके पात्रमें वोहरा दी। वोहराने के बाद भी खूब अनुमोदना की जिससे ऐसा जबरदस्त पुण्य बाँध लिया कि वह गोभद्रसेठका लाडला लाल शालिभद्र बना। दिव्य समृद्धि का भोक्ता बना।

गोरी ! तुझे इतना कौनसा दुःख... ?

संजू ! शालिभद्रकी सुभद्रा नामक एक बहनकी धन्यश्रेष्ठिके साथ शादी हुई थी। मगधमें धन्ना-शालिभद्रकी (साले-बहनोईकी) जोडी प्रख्यात थी। राजधानीमें दोनों मूर्धन्य कक्षाके श्रेष्ठिवर्य थे।

संजू ! इस धन्नाशेठनें भी शालिभद्रकी तरह ही पूर्व जन्ममें गरीब माताने दूध, चावल, शक्कर आदि पड़ोसीके पाससे याचना कर खीर बनाके खीर खाने के लिए पुत्र को दी, पुत्र ने वह सब तपस्वी मुनिराजको वोहरा दी, और उसी पुण्यकर्मसे इस भवमें अनर्गल रिद्धि-सिद्धि पाइ थी।

सुन...

धन्य श्रेष्ठिके अपने मालिकीके –

- १५०० गाँव थे...
- ६६०० क्रोड़ सोने की मोहरें थीं...
- ५०० जहाज थे...
- ५०० अश्व थे...
- ५०० गृहमंदिर थे...
- १००० वाणोतर थे...
- आठ पत्नीके आठ गोकुल...
- सात-सात मंजिलके आठ महल...
- आठ पत्नीयोंके सोने की मोहरोंसे भरे भंडार...
- चिंतामणि रत्न और दूसरे असंख्य उत्तम जाति रत्न थे...

ऐसे ऐश्वर्यवान थे धन्य श्रेष्ठि...

संजू तो सुनता ही रहा...

एक समयकी बात है !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आठों रूपरमणी (पत्नी) धन्नाको स्नान करा रही थीं। पत्नी सुभद्रा भी पतिकी पीठ मसल रही थी... रंग बराबर जमा था... और अचानक ही रंगमें भंग पड़ा... धन्यकी पीठ पर गरम दो बूँद गिरे.. धन्नाने ऊपर देखा तो सुभद्राके उदासीन चहेरे पर आँसू आ चुके थे...

धन्ना बोले : गोरी ! तुझे इतने कौनसे दुःख लगे ?

भद्रा तेरी माता, गोभद्र सेठ तेरे पिता, शालिभद्र तेरा भाई, बत्तीस-बत्तीस भौजाईयोंकी नणंद और मुझ जैसा भरतार मिलनेके बाद तुझे क्यों रोना आया ?

क्या कहुं पतिदेव ! एक ही मेरा शालिभद्र भाइ जो संयम लेने तरस रहा है... रोजकी एक-एक पत्नीका त्याग कर रहा है... दुःख तो मुझे सारी दुनियाका आ लगा है...

ओ सुभद्रा ! यह तो बिल्कुल कायरता ही है। वो क्या संयम लेगा ? कहना अलग और करना अलग.. छोड़ना है तो एक-एक क्यों ? एक ही साथ सर्वत्याग करना चाहिए...।

सुभद्रा बोली : स्वामिनाथ ! बस... बस... बहुत हो गया। सचमुच कहना आसान है... करना अति कठिन है। आठोंमेंसे एक तो छोड़कर दिखाइये ?

धन्यने कहा : **लो... सुभद्रा, अभी उठा... जा रहा हूँ... सबको राम...राम, एक साथ आठोंका त्याग, बस...?**

सुभद्रा बोली : सबूर स्वामीनाथ ! मैंने तो मज़ाक-मज़ाकमें कहा - इसको क्या पकड़कर रखना ? शायद मेरे कथनसे आपको दुःख लगा हो तो मेरा त्याग करो... पर यह सातों वधूओने कौनसा अपराध किया ? यह सातोंके साथ गृहवास बनाइये।

धन्य बोला : मुझे व्रत तो लेना ही था... तुम विघ्नरूप बन रही थी... आज ठीक मौका मिल गया। संसारमें स्वार्थके ही सगपण हैं। नारीको मोहकी राजधानी बताई है। इसको विषवेलड़ीकी उपमा दी गई है।

संजू ! भींजते शरीरयुक्त लंबी बालोंकी चोटी मोड़कर... धन्नाजी तो चल पड़े... इनका ''आतमराम'' संपूर्णरूपसे जागृत हो गया था। संजू ! पति वहाँ सती ! आठों नारीयोंने निश्चय किया कि... हम भी पतिदेवके कदम पर चलेंगे। धन्नाके पीछे आठों चल पड़ीं।

संजू ! आज हमें जहाँ जाना है वह वैभारगिरि ऊपर उस वक्त प्रभु महावीर समवसरे थे। धन्नाने उस दिशा की तरफ कदम बढ़ाये... बीचमें यही शालिभद्रकी हवेली आयी। वहाँसे पसार होते धन्नाने बूम(आवाज़) लगाई... ए...य... शालिभद्र ! नीचे उतर... चल, कंगालियत छोड़ दे... बंधनोंको तोड़ना है तो एक ही साथ तोड़ना, एकेक क्यों तोड़ना ? हो जा, तैयार ! बत्तीसोंको भी छोड़ दे, अपन दोनों प्रभु वीरके पास संयम स्वीकार करें.....

संजू ! शालिभद्रका अंतर जागृत हो उठा वह शेर तो बन ही चुका था... बस, सीढ़ी उतरनेकी ही मात्र देरी थी। किसीको भी कहे बिना शालिभद्र बिना रूके सीढ़ीयाँ उतरने लगे, माता भद्रा सिर कूटने लगी... बत्तीसों बहुओंमेंसे कितनी तो चक्कर खाते ही वहीं जमीन पर गिर पड़ीं... कितनी जोरसे रोने लगीं.. कितनी शालिभद्रके साथ सीढ़ियाँ उतर गई... कितनी आर्द्रतासे विनंती करने लगीं...

परंतु अब पीछे मुड़कर देखे वो दूसरे...

अ...ध...ध... हो जाय इतनी ऐश्वर्य और संपत्तिके इन मालिकोंको सबने भावभरा प्रणाम (अर्पित) किया... यह वंदन दोम दोम साह्यबीओंके स्वामियोंको नहीं बल्कि खेलदिली पूर्वकके त्याग को ही था...

जग-बत्तीसी से गवाई - श्रेयांस और ऋषभदेवकी जोड़ी,
नेम और राजुलकी जोड़ी,
महावीर और गौतमकी जोड़ी, श्रीपाल और मयणाकी जोड़ी,
इसी ही तरह गवाई... धन्ना और शालिभद्रकी -
साला - बहनोईकी जोड़ी... !

जय हो.. धन्ना-शालिभद्रकी... !

जय हो... इस प्रसंगको नज़रोंसे देखने वालेकी... !

जय हो... उस धन्य धराकी... !

जय हो... उस पवित्र समयकी... !

बेलड़ीने इस वैभार-गिरिपर प्रभुवीरके पास सर्वविरति सामायिक उच्चरा... (स्वीकारा...) बहुत दिनोंतक साला-बहनोई के संसार-त्यागकी चर्चा (बाते) मोहल्ले और चौटेमें चलती ही रही। पूरे नगरमें घूमराती रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मित्रयुगल : पंचपहाड़की स्पर्शनामें मशगूल...

सा

ला-बहनईकी अत्यंत रोमांचक घटनाका तादृश चित्तार सुनक मित्रबेलड़ीका हृदय भर आया... आँखें भर आईं... इनके रोम-रो पुलकित हो उठे.. क्षणभर तो संजूको भी सर्व-त्यागके पथकी ओ डग भरनेका विचार आ गया। दोम-दोम साह्यबीके मालिक भी प्र महावीर दर्शित मार्ग पर जानेका पसंद कर रहे हैं। यद्यपि वास्तवमें सच्च सुख तो त्याग और वैराग्य में ही है तो... इनके सामने हमको मिला भी क्या है ? आदि तत्त्वि बातोंमें जुड़े मित्रयुगलने इस हवेलीसे कदम उठाये पंचगिरिकी यात्रा की तरफ... और थोड़ी ही क्षणमें तो... इस पंचपहाड़की तलहटीके नज़दीक मित्रयुगल जा पहुँचा।

सूर्यका रथ भी आगे बढ़ रहा था... तलहटीकी स्पर्शना बाद चढ़ाण शुरू हुआ... उपर जाती पगदंडी के सहारे वो थोड़े ह समय में प्रथम पहाड़के शिखर पर चढ़ गये। क्षणिक (अल्प विश्राम लेने के बाद वो झड़पसे नीचे उतरे। इसी तरह अन्य

दूसरे, तीसरे और चौथे पर्वतका आरोहण और उतरना भी इन्होंने त्वरित-गतिसे किया... उन-उन शृंगोंपर रहे हुए जिनमंदिर और गुरुमंदिरोंके दर्शन भी इन्होंने उल्लास सहित किये। जो कि यह पवि पर्वतोंका स्वयंभू-महत्त्व है क्योंकि परमात्मा महावीरदेव और इनके विशाल परिवारसे यहाँकी प्रत्येक रजकण स्पर्शित है। जिससे मित्रबेलड़ीको यहाँ कोई अलौकिक दुनियाका अनुभव हो रहा था।

ऐसे चालू दिनोमें यहाँ जनसमूह कम ही होता है। इसमें भी आज मेलेका तीसरा (अंतिम) दिन था। इसीलि पूरा नगर कौमुदी-महोत्सव मनाने नगरके तीसरे दरवाजेकी ओर बादलकी तरह उमड़ा था... पंचपहाड़ की और एका आदमी भी न दिखे ऐसी परिस्थिति थी। अत्यंत प्रशांत वातावरण था। सूरजदादा बादलमें छुपे हुए थे। पर्वतीय हारमालामें विचरते दोनों मित्र एक प्याऊमें ध्यानस्थ-मुद्रामें बैठे। ध्यानमें इन्होंने प्रभु महावीरको केन्द्रित किये और अंतरकी दुनियामें खो गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामी चोरकी गुफामें....

पंचगिरिमेंसे एक मात्र मुख्य वैभारगिरिकी यात्रा और स्पर्शना बाकी थी। नजदीक के भूतकालमें जहाँ प्रभु वीरके अनेक बार समवसरण रचे हुए थे।

मित्रबेलड़ी वह वैभारगिरिकी तलेटीपर पहुँचे, प्राकृतिक सौंदर्यने उनके तन-मनको प्रफुल्लित कर दिया। परंतु वे तो आंतर-सौंदर्यको चमकानेवाले समाधि-स्थलोंको स्पर्श करना चाहते थे। चढ़ाण शुरू हुआ... वनराजीको पसार करते करते वे एक छोटी टेकरी पर पहुँच गये...

यहाँसे वानर-बच्चें वृक्षोंकी (शाखा) वडवाईको पकड़कर झूलते थे। कहीं जंगली पशु आवाज कर रहे थे। कहीं भालू डणक कर रहे थे।

राजूने अंगुलीसे बताया। देख संजू! यह छोटी-बड़ी गुफाएँ... सामान्य मनुष्य तो वहाँ पहुँच ही न सके ऐसी भयावह इन गुफाओंमें ही कहीं राजधानीका नामी (प्रख्यात) चोर रहता था। इकट्ठा किया हुआ धन और माल वह यहां छुपाता था।

नाम उसका **लोहखुर**। वह जब मरने पड़ा तब अपने पुत्र **रोहिणेयको** प्रतिज्ञा कराई कि कभी भी महावीरकी देशना नहीं सुनना... क्योंकि उसको पक्का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्वास था कि महावीरकी देशनासे हमारे बाप-दादाका चोरीका धंधा टूट जायेगा... बापने आखरी साँस ली। बापसे बेटा सवाया... **उस्ताद रोहिणीया चोरने सारी नगरीमें हंगामा मचा दिया।** खुद अभयकुमारकी बुद्धि भी इस कार्यमें असमर्थ बन गई। नगरीमें इस चोरने सदैव कहीं न कहीं तो लूटपाट की ही होती। एक बार वह गुफाकी ओर जा रहा था। बीचमें कहीं भगवंत के समवसरणकी रचना हुई थी। प्रभु देशना दे रहे थे। देशना सुनाई न दे इसीलिए दोनों कानोंको अंगुलियोंसे बराबर दबाकर चल (जा) रहा था। अचानक ही पाँवमें काँटा लगा। अब क्या करना ? अनिच्छासे भी इसने एक कानमेंसे अंगुली बाहर निकाली और झड़पसे काँटा खींच लिया। परंतु इतनेमें देशना दे रहे प्रभुवीरके चार वाक्य उसके कानोंमें आ गिरे।

(१) देव भूमिसे चार अंगुल अध्धर रहते हैं।

(२) इनको कभी पसीना नहीं आता।

(३) इनकी फूलमाला मुरझाती नहीं।

(४) इनकी आँखे फडकती नहीं।

हाय... महावीरके वचन कानमें आ गिरे.. । प्रतिज्ञानभंगसे रोहिणेय दुःखी-दुःखी हो गया।

संजू ! महाबुद्धि-निधान अभयकुमारके भी हाथ न आनेवाला यह कुख्यात चोर कितना उस्ताद होगा ? पर नहीं... एकबार वह अभयकुमारके दावमें आबाद फँसा और पकड़ा गया। मगर साक्षी (सबूत) बिना सजा कैसे करें ? आखिर अभयकुमारने उसके ही मुँहसे कबूल कराने के लिए एक युक्ति रची। उसको मदिरासे युक्त भरपूर भोजन कराया... इस दरम्यान सुंदर वस्त्र पहनाकर इसको एक ऐसी हवेलीमें सेवकों द्वारा भेज दिया गया... जहाँ सातवीं मंजिलपर स्वर्गीय माहोल जमा हुआ हो। रत्नजड़ित पलंग परसे रोहिणेयके उठनेके साथ ही कितनी दासियाँ (जैसे देवलोककी देवीयाँ) इसको मोतियोंके अक्षतसे बधाने लगीं... सेवकों (जैसे देवताएँ) ''घणीखम्मा'' ''घणीखम्मा'' कहने लगे। कितने उसको चामर ढो रहे थें... कितने पंखे झूलाते थे। चारों ओर सुगंध प्रसर रही थी। आँखें मसलते-मसलते रोहिणेय सोचता है... यह क्या ? कहाँ पहुँचा मैं ? इतनेमें ही एक सेवक (देव)ने छड़ी पुकारी... घणीखम्मा घणीखम्मा... हे देवानुप्रिय ! आपकी जय हो... मनुष्यलोकमेंसे आप यहाँ पधारे हैं... हमारे स्वा बनें हैं। आप यह तो बताइये कि आपने कौन-कौनसे पु (और पाप) किये थे। जिससे यहाँ आपका अवतरण हुआ

रोहिणेय... सोचता है... मैं तो नामी चोर था। यहाँ कै आ गया। इतनेमें तो उसको प्रभु महावीरदेवके अनिच्छा सुने गये चार वचन याद आये। अरे... मेरी आँखे तो पल मार रही हैं... मुझे पसीना भी हो रहा है। मेरे गलेमें रही पु की माला कुछ मुरझाई जैसी दीखती है। और यह सब दे देवियोंके पाँव जमीनको स्पर्श कर रहे हैं। **नक्की अभयकुमार द्वारा ही फसानेका यह षड्यंत्र है... ''चलो हम भी कम नहीं''** उसने तो खुदने किये हुए दान, पुण्य औ सत्कार्यों की गिनती करानी शुरू कर दी.. वह पूर्ण हुई सेवकने कहा - आपने कुछ पाप-कार्य भी किये होंगे न्... ना...रे पापकार्य किये होते तो स्वर्गमें मेरा अवतरण कै होता ? मैंने कुछ पाप किये ही नहीं... अभयकुमारने सा बातें जानी... अनिच्छासे (सबूत बिना) चोरको छोड़ दि गया... चोर सोचता है... महावीरके चार वचनोंने आज मु बचाया... यदि वह सुनने न मिले होते तो मेरी सूलीकी स निश्चित थी... प्रभुके जबरदस्तीसे सुने चार वचनोंका जो ऐ उपकार हुआ है तो इनके शिष्य बननेमें जीवनकी कौन सफलता बाकी रहे...? वह तो दौड़ा.. प्रभु वीरके चरणों समवसरणकी ओर... वहाँ ही स्थित राजा श्रेणिकके पा चोरीका इकरार किया और अपराधोंकी क्षमाके साथ उ जहाँ-जहाँसे चोरी की थी उसके नाम-स्थान दे अभयकुमारको सुपूर्त की और प्रभुवीरके पास दीक्षा ली।

संजू ! इसके बाद रोहिणेय मुनिने एक उपवाससे मासी तपकी उग्र तपस्या की। और यही वैभारगिरि पर अन किया। शुभध्यानपूर्वक पंचपरमेष्ठिका स्मरण करते त्यागकर रोहिणेय मुनि स्वर्गमें गये।

संजू बोला : राजू ! अपनी नगरीका महाउस्ताद भी महामुनि बना... हाँ संजय ! ताकत है... जिनवाणीके शब्दोंकी...

दोनों मित्रोंने... पुनः उपर चढ़ना प्रारंभ किया... थो ऊपर चढ़नेके बाद... महामहिम गौतमादि गणधर भगवंतो देरीओमें रहे स्वर्णमय पुनीत चरणारविंदोंको वंदन किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजू बोला, संजय ! पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामिके सिवा प्रभु वीरके दश गणधर भगवंतोंकी यह (वैभारगिरि) निर्वाणभूमि हैं। वो प्रभु वीरके परम विनीत सुशिष्य थे, द्वादशांगीके धारक थे, बीज-बुद्धिके मालिक थे।

अगाधज्ञान, फिर भी अहंकार का नामोनिशान न था... इसमें भी गौतमस्वामी तो प्रभु वीरके सन्मुख अतिनम्र बालक जैसे होकर ही रहते। उनके इस सर्वोत्कृष्ट विनय गुणको लेकर उनमें अनंत लब्धियाँ प्रगट हुई थीं। आज भी उनका नाम लेते हैं और काम होता है। वह प्रभुवीरकी भक्तिमेंसे प्रगट हुए प्रचंड पुण्यकी ही देन कही जायेगी...।

गणधर भगवंतोंकी पुण्यकथा करते-करते दोनों मित्रोंका आगेका चढ़ाण शुरू हुआ। चढ़ाण थोड़ा कठिन था... मगर सूरज दादाने आज मेहर की थी। इसमें मित्र बेलड़ीका पुण्य तो था ही...

दाईं तरफ एक छोटी पगदंड़ी जा रही थी। यह केड़ी मार्गपे २०० कदम दूर राजू, संजूको ले गया... जहाँ बड़ी शिला थी... इस शिलाके बाजूमें ही दो स्मारक थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

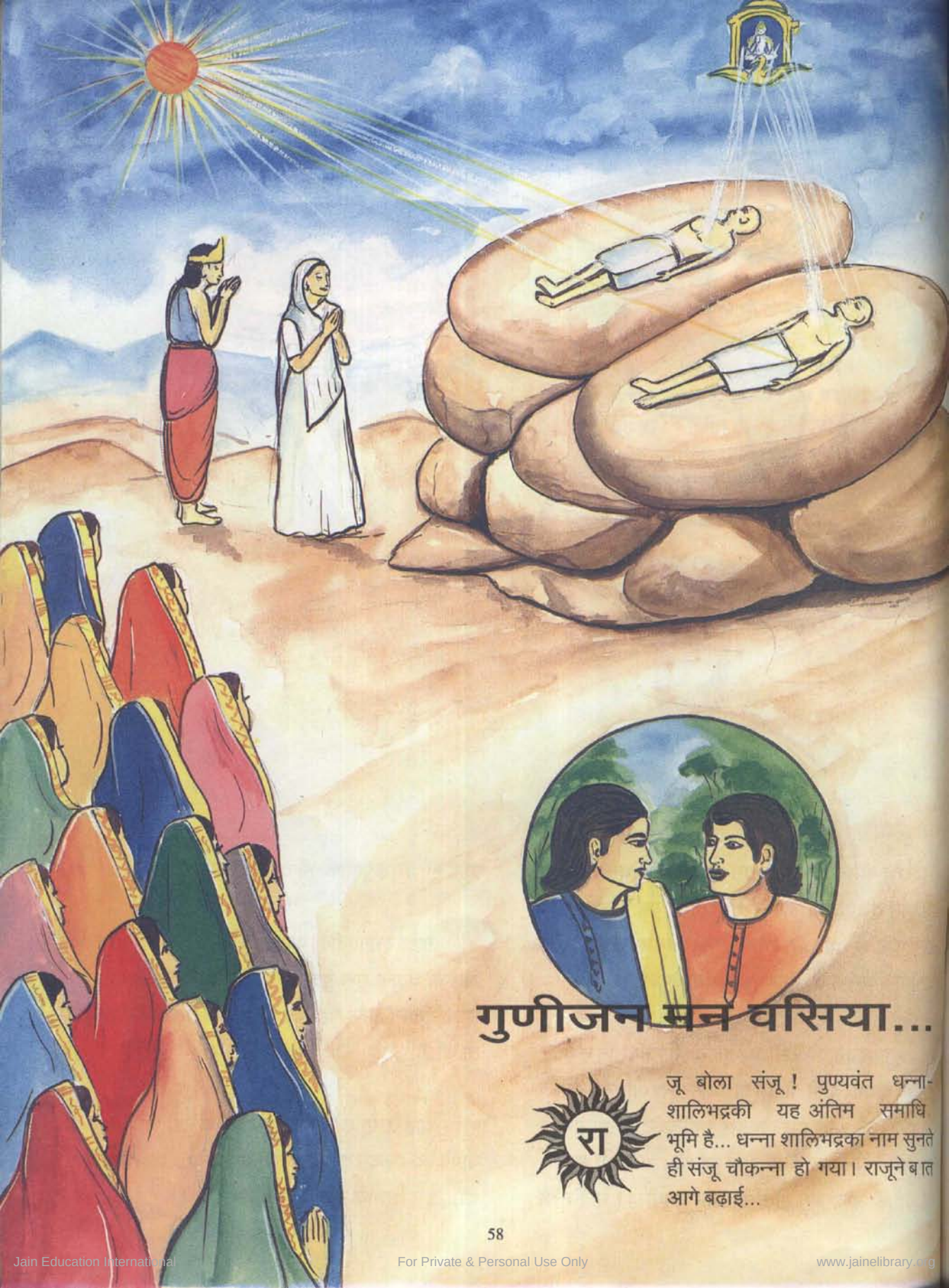

गुणीजन मन वसिया...

राजू बोला संजू ! पुण्यवंत धन्ना-शालिभद्रकी यह अंतिम समाधि भूमि है... धन्ना शालिभद्रका नाम सुनते ही संजू चौकन्ना हो गया। राजूने बात आगे बढ़ाई...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संजू ! धन्ना-शालिभद्रने दीक्षा ली उसके पश्चात् विचरते-विचरते क्रमशः प्रभुके साथमें पुनः एकबार वे राजगृहीमें आ पहुँचे। दोमासी, तीनमासी, चार मासी उपवास आदि उग्र तपस्या करते दोनोंका शरीर अतिकृश हो गया था। दोनों महात्माओंने वैभारगिरि के ऊपर जाकर अनशन करनेकी प्रभुके पास आज्ञा माँगी। प्रभुने आज्ञा दी और दोनोने यहाँ आकर यावज्जीव आहार-पानीका पच्चक्खाण करके शयनमुद्रामें ध्यानस्थ बने...

इस तरफ राजगृहीमें प्रभु वीर पधारते शालिभद्र मुनि भी साथ ही होंगे ऐसा सोचकर सभी तैयारी करके हर्षाती माता भद्रा, बत्तीस बहुओंके साथ प्रभु वीरके समक्ष पहुँची, नमस्कार करके सविनय उसने प्रभुको पूछा - भगवंत ! धन्य और शालिभद्र मुनि कहाँ है ? भगवंतने फरमाया - संसारसे शीघ्र मुक्त होने वैभारगिरि पर जाकर अभी ही अनशन किया है.....

भद्रा तो यह सुनकर राजा श्रेणिकके साथ झटपट वैभारगिरि पर पहुँची। संजू ! यह दोनों शिला पर अनशनी दोनों महात्माओंको देखकर माता भद्रा इनको एक बार अपने सन्मुख देखनेके लिए विनंती करने लगी। सूर्य धधक रहा था। धधकती शिला पर दोनों महात्माओंका देह सूखे लकड़े जैसा हो गया था...

माता भद्रा और बत्तीसों वधूओंसे यह दृश्य देखा नहीं जाता था... वह सीना फटे ऐसे रुदन करने लगीं।

संजय ! फूलकी शय्यामें सोनेवाला कहाँ श्रीमंत शालिभद्र और धधकती शिला पर देहको पिघला देनेवाले कहाँ संत शिरोमणि शालिभद्र !

श्रेणिक राजाने आश्वासन देते हुए कहा, हे भद्रे ! हर्षके स्थान में आप रुदन क्यों कर रहे हो..? आपका पुत्र महासत्त्वशाली होनेसे आप ही एक सर्व स्त्रीयोंमें सचमुच पुत्रवती हों। रत्नप्रसू भद्रे ! आपको तो ऐसे पुत्रके लिए गौरव लेना चाहिए। इस प्रकार विविध वाक्योंसे कुछ आश्वासन पाकर माता भद्रा वधुओं के साथ स्वस्थानको वापस लौटीं। दोनों मुनिवर अत्यंत शुभ ध्यानमें काल धर्म (आयुष्य पूर्ण) होते सद्गति और सिद्धिगतिको पाये। दोनों गुणियल महापुरुष गुणीजनोंके मनमें बस गये।

भोगनिष्ठ बनता है ब्रह्मनिष्ठ : रोमांचक धटना

धन्ना-शालिभद्रकी वह पवित्रतम शिलाओंकी रजकण आँखों पर लगाकर चिरकाल नमस्कार करते-करते मित्रबेलड़ी का पर्वतीय आरोहण और आगे बढ़ा। अब तो पर्वत की टोंचपर ही पहुँचना था... देखते-देखते दोनों मित्र आखरी शिखर के नजदीक पहुँच गये...

सूरजदादा बादल-संग संताकूकड़ी खेल रहे थे... मित्र-युगलने वेगसे दौड़ते उन बादलोंको भी पकड़ लिया... समझलो कि इनका ही छत्र बनाया। वो धरतीसे ठीक-ठीक ऊँचाई पर आ गये थे। दूर-सुदूर वन-निकुंजोमेंसे मीठे मधुर कोयल रानीके शब्द सुनाई दे रहे थे। स्वाभाविक सौंदर्यका लाभ उठाते और गिरिकंदराओको पसार करते मित्रबंधु एक ऐसे स्थानके पास आ पहुँचे जो जगत्का अलौकिक आश्चर्य था। वहाँ संगमरमरकी नाजुक मगर भव्य रमणीय देरी (मंदिर) थी... पवनसे फर... फर फरकती इसकी ध्वजामेंसे महासंगीत के नाद निकल रहे थे। इस नादमेंसे किसी एक महात्माकी यशोगाथा का सूर गुँज रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

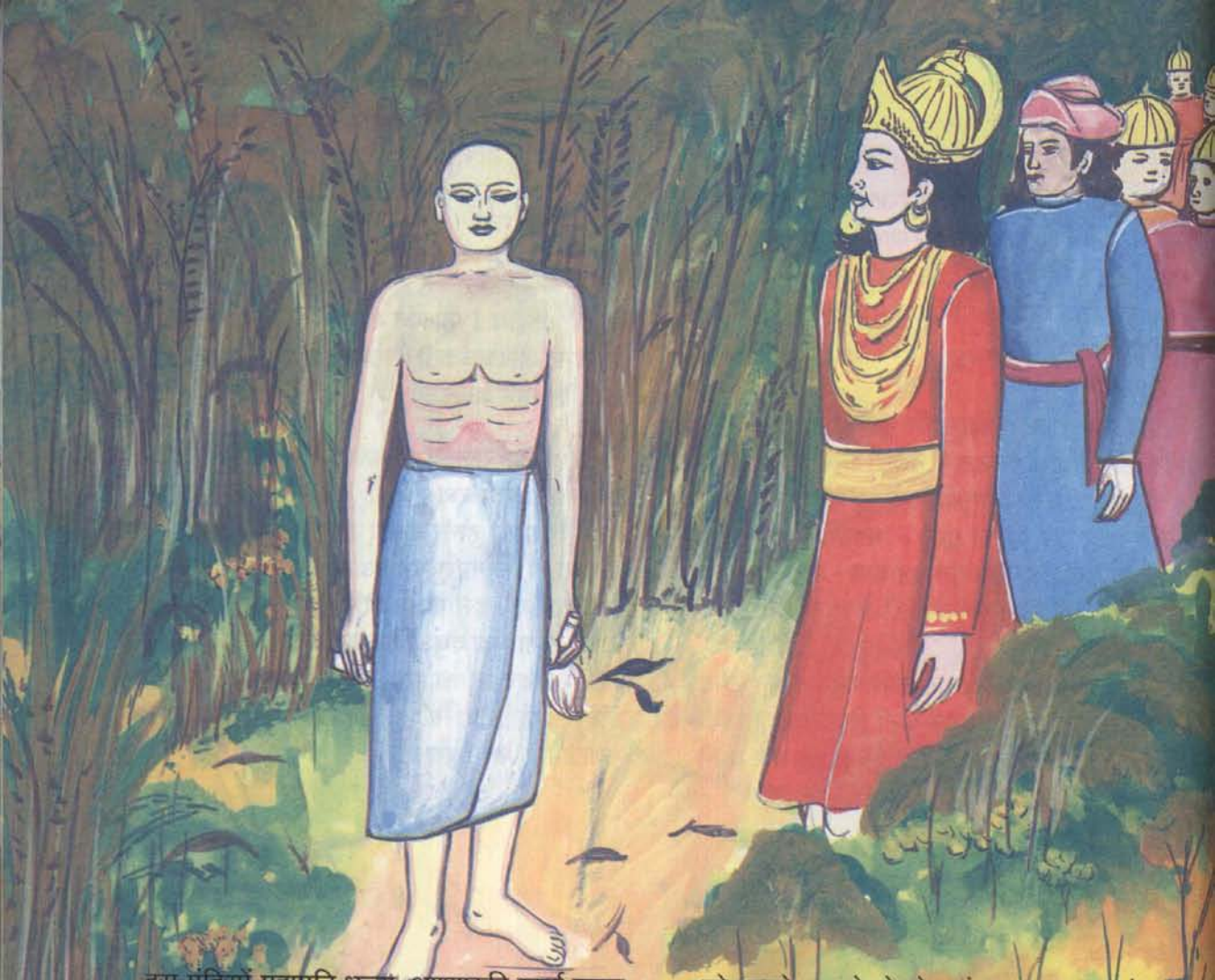

इस मंदिरमें महामुनि धन्ना-अणगारकी स्वर्ण कमल पर रही चरण-पादुकाओंके दर्शन-वंदनसे पूरी रोमांचक घटना राजूके स्मृति पथ पर उभर आयी। महामुनिके पादारविंदको सविधि वंदन करनेके बाद वहाँके पवित्र वातावरणकी खुशबुओंको मनानेके (पाने के) लिए मित्रबेलडी, उन महामुनि की अनशनभूमिके नजदीक ही सुखासन पर बैठी।

ये धन्ना-अणगार कौन ? ऐसे संजूके सवालमें राजूने कहा - संजू ! यह धन्ना-शालिभद्रकी जोड़ी कही जाती है वह नहीं, परंतु इन्हें तो धन्नाकांकदी कहते हैं। जो कांकदी नगर के वासी थे। भद्रा माताके लाड़ले-लाल थे। यह **३२ क्रोड स्वर्ण-मोहरोंके मालिक** थे। रूप-रूपके अंबार जैसी **३२ रूप-रमणियोंके स्वामी** थे। इनके समक्ष सदा **३२ पकवानोंका थाल रखा जाता था।** अभी कल ही जिसने ३२ रमणियोंके संग उद्यानमें जाकर क्रीड़ा की थी... पुष्प-गुच्छों को आमने-सामने छोड़नेका रंग जमाया था... सुंदर प्रकार खट्टे-मीठे फलोंके रसका आचमन किया था.. चंपकतरु नीचे बैठकर प्यार भरी मीठी-मीठी कहानियोंका वार्तालाप हुआ था...

ऐसे **भोगनिष्ठ** धन्यकुमार आज परमात्मा महावीरकी एकही देशना श्रवणसे **विराग-निष्ठ** बन गया था।

माता भद्रा भद्रासनपर बैठे थे... धन्यकुमारने अपनी विनंती माता के समक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा...

माताजी ! अपने नगरके बाहर उद्यानमें त्रिलोकीनाथ महावीर देव पधारे थे। इनकी देशनामें परिग्रहको पापका बाप, हिंसाको पापकी माँ तथा अब्रह्मसे होते अनर्थोंका जो आलेखन किया, वह सचमुच हृदयद्रावक था। यह वाणी, सिर्फ वाणी ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं थी परंतु अमृत थी... अद्‌भुत थी, अपूर्व थी।

माताजी ! प्रभु महावीरके उपदिष्ट सर्वसुखकर सर्वत्यागके पथ पर जाने के लिए मंगल आशिष आपका यह बालक चाहता है।

संजू ! एक आवाजसे (धमाकेसे) सर्वत्यागकी बात सुनकर जैसे वज्रपात हुआ हो ऐसे अधध... करती माता मूर्च्छित बनी और धरणी पर जा गिरी। बत्तीस नवयौवनायें धन्य और माताकी चारों ओर खड़ी हो गई। सबकी आँखोंमे पोस पोस आँसू थे... इनके हृदय टूट चुके थे।

शीतोपचारसे माता जागृत हुईं। बह रही आँखोसे इन्होंने अपने लाड़लेको बहुत समझाया... अनेक सवाल-जवाबोंकी झड़ी बरसी... परंतु धन्यको मेरुकी तरह अड़िग-निश्चल देखकर माता आखिर थकी... हारी... अंतमें तो वह - सुश्राविका थी। प्रभु वीरकी परम भक्त थी। बत्तीस कामिनीओंको भी (मनमें) हो गया कि ''जबरदस्तीमें प्रीत नहीं होती...'' सबको यकीन हो गया कि धन्यकुमार अब एक या दो दिनके महेमान हैं...

भद्रा (माता) अपनी नगरीके (काकंदीके) राजा जितशत्रुके पास गई। भेटणा रखकर बोली महाराजन् ! मेरा लाड़ला, वीर परमात्माकी वाणी सुनकर परम वैरागी हुआ है। तो इसका महोत्सव मनानेके लिए छत्र-चामर, साज, शणगार, सैन्य और वाजिंत्रोंके समूहकी याचना के लिए आयी हूँ। राजा के रोमांच खड़े हो गये। वह सिंहासन से खड़ा हो गया।

वह बोला : ओ भद्रे ! ओ रत्नकुक्षि ! अरबोंका मालिक शणगार बनने तैयार हुआ है तो इसका महोत्सव राज्य तरफसे होगा।

राजा जिन और जैन का अनुरागी था। वीरप्रभुका अनन्य भक्त था। उसने पूरी नगरीमें पडह बजवाया... माता ने धन्य के मस्तक पर हाथ रखा... बत्तीस वधूओंने सजल नेत्रसे मंगल कामना व्यक्त की। राजा जितशत्रुने धन्यको बाहुपाशमें जकड़ लिया... चूमी भरी और शुभाशिष दी।

राजा इसके अतिशय सुकोमल देहको देखता ही रहा। यह सुकुमार देह क्या साधनाके कठोर पथको सहन करेगा...? डांस-मच्छरके उपसर्गको सहन कर सकेगा..? शीतऋतुकी कड़कड़ती ठंडीमें स्थिर रह सकेगा... ? खुल्ले पाँव का विहार इसको लहुलुहान तो नहीं करेगा... ? सच ही... रागीको वितरागका पंथ कठिन लगता है...
विरागीको राग-दशाका पंथ खारा लगता है...

आखिर महा आडंबर सह धन्यकुमारकी शोभायात्रा शुरू हुई... वृद्धाओंने मंगल किया। नारियाँ मधुर गीत-गानेमें खो गईं... शहनाईयों के सुर बज उठे, वाजिंत्रोंके नाद आकाश-पाताल को एक करने लगे।

खुद राजा जितशत्रुने धन्यकुमारके ऊपर छत्र धारण किया... नगरजन धन्यकी शिबिकाको कंधेपर उठाने के लिए एकसाथ उमड़ पड़े। नगरकी प्रत्येक अटारी, अगाशी, मार्ग और राजमार्ग पर मानव-समूह उभर उठे।

जय हो... वीतरागी प्रभु वीरकी...
जय हो... विरागनिष्ठ धन्यकी...
जय हो... विरतीप्रेमी राजा जितशत्रुकी...
जनतामेंसे जयनादके स्वर गुँज उठे।

अब धन्ना मात्र भद्राका ही लाड़ला नहीं था ! पूरी नगरीका वह लाड़ला बन गया था। **विनयनिष्ठ** धन्यकुमार सबको अंजलि जोड़ते और सबकी मंगल कामनाओंको स्वीकारते स्वीकारते पहुँच गये नगरीके बाहरके उद्यानमें प्रभु महावीरके पास... धन्यकुमारने प्रभुको तीन प्रदक्षिणा देकर सविधि वंदन किया... वस्त्रालंकार उतारकर माता भद्राको सौंपे। बादमें केशलुंचनके लिए हाथ उठाया। माता भद्राने आँखें पालव से मूँद दी... बत्तीस बधूओंने वस्त्रको आँखों पर धारण किया। क्योंकि केश-लुंचनका यह दृश्य देखा नहीं जाता था। माता और बहुएँ सभीकी आँखोमेंसे गंगा-जमुना बह रही थी। आखिर माता भद्राने प्रभुको पुत्रभिक्षा अर्पण की... (व्हेराई) प्रभुने धन्यको पंचमहाव्रत उच्चराये... धन्यका मन-मयूर तो नाच उठा। उसके अंग-अंगमें आनंदका सागर छलक (उछल) उठा...

विराग-निष्ठ धन्य अब त्यागनिष्ठ बना। उन्होंने तत्काल ही प्रभुके पास यावज्जीवके लिए छट्ठके पारणे आयंबिल करने का कठिन अभिग्रह लिया। **त्याग-निष्ठ धन्य अब तपोनिष्ठ बनें।** राजा जितशत्रु और भद्रा आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सपरिवार वापस लौटे।

एकदा विहार करते-करते प्रभुवीर अपनी (राजगृही) नगरी में पधारे... आडंबर सहित राजा श्रेणिक प्रभुको वंदन करने आये। प्रभुकी भाव-सहित भक्ति की, और श्रेणिकने सवाल किया... प्रभो ! आपकी चौदह हजार मुनियोंकी पर्षदामें दिन-प्रतिदिन चढ़ते परिणामवाले उत्कृष्टा अणगार कौन ? प्रभुने मेघगंभीर ध्वनिमें उत्तर दिया... । काकंदी नगरीके भद्रा माताके लाड़ले सुकुमाल धन्यकुमारने भरे यौवनमें भारी-वैराग्यसे मेरे पास चारित्र ग्रहण किया... अभी तो इसको थोड़े मास ही हुए हैं। परंतु श्रेणिक ! चौदह हजार महात्माओंकी साधनाको भी अतिक्रांत कर जाय ऐसी इनकी बाह्य और आंतरिक साधना है।

संयम ग्रहण करनेके पश्चात् आज दिन तक विशुद्ध -सुविशुद्ध परिणाम दिन-दुगुना रात चो-गुणा - बढ़ते ही रहा है। छट्ठके पारणे आयंबिल और (जो) आहारके ऊपर मक्खी भी न बैठे ऐसा तद्दन निरस शुष्क आहार मात्र देहको टिकानेके लिए ही ले रहे हैं। ऐसे भीष्मतपसे इनका मस्तक धूपमें सुखाये तुंबड़े जैसा और आकाशके तारेकी तरह तगतगती इनकी दोनों आँखे भीतर जा चुकी है। जिसमें थूंकका अंश भी दिखने न मिले ऐसी शुष्क पर्ण जैसी इनकी जीभ बनी है। इनकी दश-अंगुलियाँ सूखी मूँगकी शींग जैसी हो गई है। इनकी कोणी की दो हड्डियाँ बिल्कुल बाहर निकल आयी है...

गोचरीके लिए जाते है तो हड्डियोंकी खड़खड़ आवाज आ रही है...

यह तपोनिष्ठ अणगारकी ऐसी साधना सुनकर बारों पर्षदामें सन्नाटा छा गया। गौतमस्वामी आदि मुनिपुंगव भी विस्मयमें डूब गये... इनके मुखमेंसे गुणानुरागके शब्द निकल आये... और श्रेणिक...? श्रेणिक तो पकड़में ही न रह सके... वह तो अपनी छोटीसी सवारी लेकर पहुँचे... जहाँ प्रभुने स्थल-सूचित किया था उस वनमें... ध्यानस्थ धन्ना अणगारको वंदन के लिए... परंतु यह क्या ? अणगार तो कहीं दिखते ही नहीं... ! श्रेणिकने सेवकोंको जंगलमें चारों ओर दौड़ाया। खुद शोध करने लगे... परंतु असफल...

आखिर सुक्ष्म निरीक्षणसे मिले सही...

देख लो, जैसे जंगलके शुष्क वृक्ष ही। अतिकृश कालीमेंश काया खोजनेसे भी कैसे मिले... ? जैसे प्रभुवीरने वर्णन किया ऐसा ही अणगारका रूप देखकर राज इनके चरणोंमें झुक गया। अमावस्याकी रात्रि जैसी काल कायामें भी इनके मुख पर विरागका पूर्णचंद्र सोलह कलाः खिल उठा था। इनके ललाट पर ब्रह्म-तेज झलकत था। इनकी कायामें तपकी कांति झलक दे रही थी। राज तो इस विराटके पास वामन बन गया। जातको अति तुच्छ गिनने लगा... अणगारकी बार-बार स्तुति करते और वंदन करते राजा श्रेणिक स्वस्थान लौटा। धन्ना अणगारने भी प्रभुके पास आकर वैभारगिरि पर अनशन स्वीकारनेकी अनुमति माँगी। प्रभुने सहर्ष अनुमति दी... और संजू ! बस, इसी स्थान पर एक मासके उपवास करके अनशन किया... मर्त्यलोकका यह चमकता सितारा नवमासका चारित्र पालकर संसार के सर्वोत्कृष्ट सुखके धामस्वरूप सर्वार्थसिद्धिमें देव बने। आज भी यह परम विरागी दशामें झीलते दैवी सुखोंको अनुभव कर रहे हैं।

भोगनिष्ठमेंसे ब्रह्मनिष्ठ बने अणगारकी रोमांचक कहानी सुनकर संजूका हृदय वशमें न रहा... उसकी आँख छलक आईं... उसको स्वाभाविक ध्यान लग गया। आधी घड़ी तक धन्ना-अणगारकी ब्रह्मनिष्ठामें यत्किचिंत् लीन बने। राजूने उसको हिलाया... अनशन भूमिकी उस पवित्र रेतको मस्तक पर लगाया... भावविभोर हृदयसे दोनोंने नीचे उतरने के लिए पाँव उठाया... संध्या समयका अभी थोड़ासा उजाला था। नवमासके अंदर तो धन्यमुनिने कैसा आत्मकल्याण साध लिया वह तत्त्वकी... विचारणामें... ! कतना पथ कट गया इसका भी ख्याल न रहा। इन्होंने वैभारगिरिकी तलेटी पर पाँव रखा... वातावरणमें नीरव शांति थी। आज कौमुदी मेलेका आखरी दिन था... नगरकी जनता नगरके सामनेके छेडेसे नगरमें लौट रही थी।

झटपट चलते दोनों मित्र नगर-द्वार के पास आ पहुँचे... यहाँसे इनको टाँगा-गाड़ी मिल गई... दोनो टाँगेमें बैठे। उस शालिभद्रकी हवेलीके पुनः दर्शन हुए। घोड़ागाड़ी मध्यम गतिसे जा रही थी। घर-घरमें दीप प्रगट चुके थे। कहीं टाबर मोहल्लेमें खेल रहे थे... कहीं बछड़े भांभरते थे। शंखोंकी आवाज आ रही थी। कहीं भजन-कीर्तन चालू थे... कोई घरके आँगनमें शय्या पर सो रहे थे... वो मेलेका श्रम दूर कर रहे थे...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

''राजगृह'' नाम कैसे हुआ ?

जूको अचानक ही कुछ याद आया। उसने पूछा राजू ! राजधानीका ''राजगृह'' ऐसा नाम कैसे हुआ ? राजू बोला... संजय ! प्राचीन कालमें क्षिति-प्रतिष्ठित नगरमें जितशत्रु राजा राज्य करता था। परंतु वह नगर जीर्ण हो जानेसे राजाने वास्तु-शास्त्रज्ञोंको अन्य स्थलकी खोज के लिए कहा। इन्होंने एक जगह पर बहुत ही पुष्प और फलोंसे युक्त एक चनेका खेत देखा। वह भूमि पसंद की और राजाने वहाँ चणकपुर नगर बसाया। क्रमश: वह नगर भी क्षीण हुआ। फिरसे राजाने वास्तु-पाठकों को नई जगह खोजनेके लिए आदेश किया। जगह शोधते-शोधते जंगलमें एक बैल देखनेमें आया। जो दूसरे अनेक बैलोंसे अपराजित था। अर्थात् बहुत बलवान था। वास्तुज्ञोंसे सूचित उस जगह पर राजाने वृषभपुर नगर बसाया। कालक्रम से वह नगर भी उजड़ बना। फिरसे नया नगर बसानेकी राजाने सूचना की। खोजते-खोजते एक जगह अति सुंदर और प्रमाणोपत आकृतिवाला एक कुश (वनस्पति) का छोर देखनेमें आया। वास्तुपाठकोने वह जगह राजाको दिखायी। राजाने वहाँ कुशाग्रपुर नगर बसाया।

परंतु उस नगरमें बार-बार आग लगने लगी। वहाँ प्रसेनजित राजा राज्य कर रहा था। उसने नगरमें घोषणा कराई कि जिस घरमें आग लगेगी वह घरकी व्यक्तियोंको नगर बाहर छोड़ दिया जायेगा। परंतु बना ऐसा कि रसोइयोंके प्रमादसे एकबार राजमहलमें ही आग लगी। वह समयके राजा ''प्राण जाय पर वचन न जाय'' ऐसी सत्यप्रतिज्ञावाले थे। प्रसेनजित राजाने सोचा - मैंने किया हुआ नियमका पालन मैं ही नहीं करूँ तो प्रजा वह नियम कैसे पालन करेगी ? तुरंत ही राजा नगरमेंसे निकलकर एक गाऊ दूर आवास करके रहा... अब राजाको मिलने तो कितने लोग आते... सुभट-कोटवाल-व्यापारी-सेठ-साहूकार आदि... एक आये और एक जाये... सामने जो मिले उनको पूछनेमें आये - कहाँ गये थे। **राजगृहे...** (राजा के घर) कहाँ जा रहे हो ? **राजगृहे** करते-करते वहाँ जो नगर बसा उसका नाम ही ''**राजगृह**'' हो गया।

संजू ! जब राजमहलमें आग प्रगटी तब जिसको जो प्रिय था उसे लेकर सब झटपट बाहर निकल गये। किसीने घोड़ा लिया तो किसीने हाथी लिया तो किसीने हीरे-माणिक और मोती लिये। उस वक्त प्रसेनज़ित राजाने राजकुमार श्रेणिकको पूछा कि तूने क्या लिया ? श्रेणिकने कहा - भंभा (वाजिंत्र) ! श्रेणिकको भंभा खूब पसंद थी। राजा प्रेमसे बोला - बेटा ! तुझे भंभा अच्छी लगती है। लो तब तुम्हारा नाम ''भंभासार''... ऐसे राजा श्रेणिकका दूसरा नाम ''भंभसार'' भी था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बात रुके इसके पहले ही घोड़ागाड़ी रुक गई।

दोनों मित्र नीचे उतरे। चाँदनीके उजालेसे हरी-भरी रात भी आगे बढ़ रही थी। मित्रबेलड़ी घर-पर पहुँची। और क स्वप्नलोककी ओर डूबकी लगा दी इसकी तो खबर ही न रही।

राजगृहकी यह वांभ उछलती गौरवगाथा स्वप्नलोकमें भी सत्यलोक जैसी ही ताजी थी।

राजधानीकी... जय हो !

राजाधिराजकी... जय हो !

राजा श्रेणिककी... जय हो !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नालंदा-पाड़ेकी सज्झाय :

मगध देशमांही बिराजे सुंदर नयरी सोहेजी,
राजगृही राजा श्रेणिक रे भविजनना मन मोहेजी ।
एक नालंदे पाड़े प्रभुजीने चौदह किये चोमासाजी १
धन ने धर्म नालंदे पाड़े, दोनुं बात विशेषोजी,
फरी फरी वीर आये बहुवारे उपकार अधिको दाख्योजी... एक नालंदे २
श्रावक लोक बसे धनवंता, जिनमारगके रागीजी,
घर-घर मांहे सोना-चांदी, जिहां ज्योति जागीजी... एक नालंदे ३
ज़डाव घरेणां जोर बिराजे, हार मोती नवसरीयाजी,
वस्त्र पहेरण भारे मूलां, घरेणां रत्ने जडीयांजी... एक नालंदे ४
पड़िमा वंदन सघला जावे, रचना करे उल्लासोजी,
केसर चंदन अर्चे बहुलां, मुक्तितणा अभिलाषोजी... एक नालंदे ५
तीन पाट श्रेणिक राजाना, हुआ समकित धारी लगताजी,
जिनमारगकुं जोर दिपाव्यो, वीरतणा बहु भगताजी... एक नालंदे ६
पियरमांही समकित पामी, चेलणा पटराणीजी,
महासती जेणे संयम लीधो, वीर जिणंदे वखणीजी... एक नालंदे ७
जंबु सरीखा हुआ ते जेणे आठ खंतेउरी परणीजी
बालब्रह्मचारी भला विचारी जेणे कीधी निर्मल करणीजी... एक नालंदे ८
शालिभद्र गोभद्रका बेटा बहनोई वळी धन्नोजी,
सहित सेभद्रा संयम लीधो, मुक्ति जावणरो मन्नजी... एक नालंदे ९
गोभद्र शेठ गुणवंता जेणे संयम मारग लीनोजी,
महावीर गुरु मोटा मळीया, जेणे जन्म मरण दुःख छीनोजी... एक नालंदे १०
अभयकुमार महाबुद्धिवंतो जेणे प्रधान पदवी पामीजी,
वीर समीपे संयम लीधो मुक्ति जावणरो कामीजी... एक नालंदे ११
शेठ सुदर्शन छेल्लो श्रावक वीर वंदन ने चाल्योजी,
मारग बीचमें अर्जुन मळीओ पण न रह्यो तेणे झाल्योजी... एक नालंदे १२
अर्जुन होई गयो ते साथे, वीर जिणंदने भेटयाजी,
माळीने दीक्षा देवरावी, सब दुःख नगरीना मेटयाजी... एक नालंदे १३
त्रेवीश तो श्रणिकनी राणी, तप करी देह गाळीजी,
मोटी सतीयो मुक्ति बिराजे, कर्मतणा बीज बाळीजी... एक नालंदे १४
त्रेवीश तो श्रेणिकना बेटा, उपन्या अनुत्तर विमानोजी,
दश पौत्र देवलोके पहोंच्या, ते सवि होशे निर्वाणोजी... एक नालंदे १५
महाशतक जे मोटो श्रावक, तेने छे तेर नारीजी,
करणी करीने कर्म खपाव्या, हुआ एक अवतारीजी... एक नालंदे १६
मेघकुमार श्रेणिकनो बेटो, जेणे लीधो संयम भारजी,
वेयावच्च निमित्ते काया वोसिरावी, दो नयणारो सारजी... एक नालंदे १७
श्रेणिक राजा समकीत धारी, तेणे शुं धर्म उद्योतोजी,
एकण घरमें दो तीर्थंकर, दादो ने वळी पोतोजी... एक नालंदे १८
उत्तम जीव उपन्या छे अट्टे, श्रावक नेवळी साधोजी,
भगवंतनी जेणे भक्ति कीधी, धन्य मानवभव लाधोजी... एक नालंदे १९
शासननायक तीरथस्थापी, शाश्वतां सुख लेशेजी,
हरखविजय कहे केवल पामी, मुक्तिमहेलमां जाशेजी... एक नालंदे २०
संवत पंदरशें चौआंलीशे, रही नागोर चोमासुंजी,
संघ पसाये सवि सुख लीनो, कीधो ज्ञान प्रकाशोजी...
एक नालंदे पाडे प्रभुजीए चौद कीयां चोमासाजी २१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताजा कलम

जब धन्ना-शालिभद्र और धन्ना-काकंदो को
भरपूर सुख-साहबीका एकही झटकेमे त्याग और महाभिनिष्कमण
के पथ पर विचरण-----
यह विवेचन----- (भलेही बाल भाषामे) लिखते लिखते तो
मेरी आँखो में भी दो बूंद आ गयी....
मेरे हिसाबसे ये दो बुंदेही राजगृही की चारो ओर परिकम्मा लगाती
राजु और सजुकी मित्र-जोडी है..... जो घटनाओको तात्त्विक विचारणाकी
कसोटीपर चडती है।
घटनाये बिलकूल सत्य है.... बनी हुयी हकीकत है...

जब की दोनो पात्र और कुछ घटनास्थल काल्पनिक है।
फिर भी घटनाओंको सुंदर आकार देते है।

मित्र-जोडी के साथ आप भी जुड जाना...
उस घटनाओं और घटनास्थलों को स्पर्श करते करते आपके नयनों में कहीं
एक बार दो बूंदे संवेदनाकी आ जाये तो समझ लेना की .....
आपकी राजधानी (राजगृही) की भावयात्रा सफल....

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org